प्रकरण उन्नीस

बीजारोपण

होवर्ड ने पूछा, "आज सवेरे आपने जो कुछ कहा, क्या उसका तात्पर्य यह है कि हमें आध्यात्मिक गुरु को ईश्वर मान लेना चाहिए?"

प्रभुपाद ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया, "इसका तात्पर्य यह है कि आध्यात्मिक गुरु को वही सम्मान मिलना चाहिए, जो ईश्वर को, क्योंकि वह ईश्वर का प्रतिनिधि है।"

"तो वह ईश्वर नहीं है?"

"नहीं," प्रभुपाद ने कहा, "ईश्वर ईश्वर हैं। आध्यात्मिक गुरु उनका प्रतिनिधि है। इसलिए वह ईश्वर जैसा है, क्योंकि वह सच्चे शिष्य को ईश्वर से मिला सकता है। क्या अब यह स्पष्ट है?"

—हयग्रीव के साथ वार्तालाप से

अगस्त १९६६

यह कामचलाऊ व्यवस्था थी—एक स्टोरफ्रंट को मन्दिर में बदल दिया गया था और एक दो-कमरे के प्रकोष्ठ को गुरु महाराज के आवास और अध्ययन-कक्ष में परिवर्तित कर दिया गया था—फिर भी वह अपने में पूर्ण थी। नगर की गंदी बस्तियों के बीच वह पूरा विहार या मठ ही था। मन्दिर (स्टोरफ्रंट) लोअर ईस्ट साइड के भूमिगत हिप्पियों में शीघ्रता से विख्यात होता जा रहा था; उसका प्रांगण महत्त्वाकांक्षी भिक्षुओं के लिए आश्चर्यजनक शान्तिपूर्ण स्थान था। उसमें एक छोटा-सा बगीचा था, पक्षी-अभ्यारण्य था और अनेक वृक्ष थे और ये सब सामने और पीछे की इमारतों के मध्य में दबे-से अवस्थित थे; स्वामीजी का पीछे का कमरा विहार का पावन गर्भ-स्थल था। प्रत्येक कमरे की अपनी निजी विशिष्टता थी—या यों कहें कि स्वामीजी के कार्यकलापों के

कारण प्रत्येक कमरे का अपना विशेष लक्षण था।

मन्दिर का कमरा उनके कीर्तन और व्याख्यान का हाल था। उनका व्याख्यान सदैव गम्भीर और विधिवत् होता। प्रारम्भ से ही, जब कोई मंच नहीं था और उन्हें थोड़े से अतिथियों के सामने तिनकों की चटाई पर बैठना पड़ता था, यह स्पष्ट था कि वे धर्मोपदेश के लिए आये थे, लोगों को जब-तब आमंत्रित करके प्रश्नोत्तर-वार्तालाप के लिए नहीं। जब तक वे अपना व्याख्यान समाप्त नहीं कर लेते थे तब तक प्रश्नों के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। श्रोता-मण्डली फर्श पर बैठती और पैंतालीस मिनट तक, जब वे समस्त वैदिक ज्ञान का दान करते, उन्हें ध्यानपूर्वक सुनती। वे सदैव वेदों के प्रमाण के आधार पर बोलते—संस्कृत और पूर्ववर्ती आध्यात्मिक गुरुओं से उद्धरण देते हुए, तर्क और युक्ति से समर्थित सम्पूर्ण ज्ञान का सम्प्रेषण करते हुए। सड़क से आने वाले शोर-गुल से संघर्ष करते हुए वे सही विद्वत्ता और गम्भीर भक्ति से परिपूर्ण व्याख्यान देते। ऐसा प्रतीत होता था कि उन्होंने अपने पूर्ववर्तियों के सभी संदर्भों और निष्कर्षों पर बहुत पहले ही पूरा अधिकार पा लिया था और सभी भावी बौद्धिक चुनौतियों का भी उन्होंने पूर्वानुमान कर लिया था।

वे स्टोरफ्रंट में कीर्तन भी करते थे। व्याख्यानों की तरह कीर्तन भी गम्भीर होते थे, किन्तु वे उतने औपचारिक नहीं होते थे; कीर्तन के मध्य प्रभुपाद उदार रहते थे। अभ्यागत हारमोनियम, काठ की बांसुरी, गिटार आदि लाते और कीर्तन की लय का अनुसरण करते या स्वयं अपनी लयों की सर्जना कर लेते। कोई व्यक्ति एक पुराना तन्तुवाद्य और गज उठा लेता और कोई अभ्यागत प्रोत्साहित होकर उसे बजाने लगता। कुछ लड़कों को एक खड़ी पियानो का भीतरी हिस्सा किसी कूड़ेखाने के निकट सड़क पर पड़ा मिल गया था और उन्होंने उसे मन्दिर में लाकर दरवाजे के पास रख दिया। कीर्तन के मध्य स्वच्छंद अतिथि उसके तारों पर हाथ फेर देते और विचित्र संगीत-लहरियाँ पैदा करते। राबर्ट नेल्सन, कई सप्ताह पहले एक बड़ी झांझ लाया था, जो अब स्वामीजी के मंच के निकट छत से झूलती रहती थी।

किन्तु उच्छृंखलता की भी एक सीमा थी। कभी-कभी एक नवागन्तुक करतालों को उठा लेता और मानक त्रिताल एक-दो-तीन के अतिरिक्त अन्य ढंग से बजाने लगता, तो स्वामीजी किसी लड़के को उसे ठीक करने के लिए कहते, भले ही इससे वह अतिथि नाराज हो जाए। प्रभुपाद कीर्तन का नेतृत्व करते और अपने एक हाथ से एक छोटे-से बोंगो-ड्रम पर थाप देते रहते थे। इस छोटे-से बोंगो-ड्रम पर भी वे बंगाली मृदंग की तालें इतने मनोहारी ढंग से निकालते कि एक स्थानीय कोंगा ढोलकिया उन्हें सुनने के लिए आता था: "स्वामीजी कुछ बहुत अच्छी तालें निकालते हैं।"

स्वामीजी के कीर्तन एक नवीन उत्कर्ष की सृष्टि कर रहे थे; उनके कीर्तन का

अनुसरण करते हुए लड़के विस्मय-पूर्ण नेत्रों से एक-दूसरे की ओर देखते और सिर हिलाते। नशे के अपने पूर्व अनुभवों से इसकी तुलना करते हुए वे एक-दूसरे की ओर अपनी अनुकूल प्रतिक्रिया का संकेत करते : "यह महान् है। यह एल.एस.डी. से अच्छा है।" "आहा, दोस्त, यह वास्तव में मुझे बहुत ऊपर ले जा रहा है।" और प्रभुपाद उनके इस नये नशे को प्रोत्साहन देते थे।

इन कीर्तनों में निपुण होने के साथ वे उनके गुरु की भूमिका भी दक्षतापूर्वक निभा रहे थे। चैतन्य महाप्रभु ने कहा था कि, "कीर्तन के पवित्र नाम के गायन के कोई कठोर नियम नहीं हैं।" और प्रभुपाद ठीक उसी तरह कीर्तन को लोअर ईस्ट साइड में लाए थे। "यह आध्यात्मिक जीवन का एक बाल-विद्यालय है," उन्होंने एक बार मन्दिर के विषय में कहा था। *भगवद्गीता* पर व्याख्यान देते हुए और हरे कृष्ण कीर्तन का नेतृत्व करते हुए यहाँ उन्होंने लोगों को कृष्णभावनामृत का क, ख, ग सिखाया। कभी-कभी अन्तिम कीर्तन के पश्चात् वे रुचि रखनेवाले लोगों को अपने प्रकोष्ठ में और अधिक वार्तालाप के लिए आमंत्रित करते थे।

• • •

अपने निवास के पिछले कमरे में प्रभुपाद सामान्यत: अकेले होते थे, विशेषकर दो, तीन या चार बजे प्रात:काल जबकि अन्य कोई न जगा होता था। भोर की इस बेला में उनका कमरा शान्त होता था और कृष्ण के साथ सान्निध्य की भावना से वे अकेले काम करते थे। वे अपने सूटकेस रूपी चौकी के पीछे फर्शपर बैठ जाते और *श्रीमद्भागवत* का अनुवाद तथा तात्पर्य टाइप करने के रूप में, कृष्ण की आराधना में लग जाते।

किन्तु यही पिछला कमरा बैठकों के काम में भी आता था और जो कोई भी आकर स्वामीजी का दरवाजा खटखटाता, वह अन्दर आकर किसी भी समय उनसे आमने-सामने बात कर सकता था। प्रभुपाद टाइप करने का काम बन्द करके टाइपराइटर से पीछे हटकर बैठ जाते थे और उससे बात करने, उसकी बात सुनने, प्रश्नों के उत्तर देने या कभी कभी उससे तर्क या हास-परिहास करने में उनका समय जाने लगता। आगन्तुक चाहे तो अकेले ही उनके पास आधे घंटे तक बैठा रह सकता था, जब तक कि कोई दूसरा आकर दरवाजा न खटखटाए और तब स्वामीजी उसे भी अन्दर बुला लेते थे। नये आगंतुक आते रहते और पहले वाले जाते रहते, किन्तु स्वामीजी बैठे रहते और बातें करते रहते।

सामान्यत: लोगों का आना औपचारिक होता—आगंतुक दर्शन-सम्बन्धी प्रश्न पूछते और स्वामीजी उनका उत्तर देते, लगभग उसी प्रकार जिस प्रकार स्टोरफ्रंट में व्याख्यान के बाद देते थे। किन्तु कभी-कभी कुछ लड़के, जो उनके गम्भीर अनुयायी बनते जा रहे थे,

उनके समय पर एकाधिकार कर बैठते—विशेषकर मंगलवार, बृहस्पतिवार, शनिवार और रविवार की रातों को, जब मन्दिर में शाम का प्रवचन नहीं होता था। प्राय: वे उनसे व्यक्तिगत प्रश्न पूछने लगते। जब वे पहले-पहल न्यूयार्क पहुँचे, तो उन्हें कैसा लगा था? भारत कैसा है? क्या वहाँ उनके अनुयायी थे? क्या उनके परिवार के सदस्य कृष्ण के अनुयायी थे? उनके गुरु कैसे थे? तब प्रभुपाद भिन्न शैली में बात करने लगते—अधिक शान्त, आत्मीय और विनोदपूर्ण शैली में।

उन्होंने बताया कि किस तरह उन्होंने न्यूयार्क में पहले-पहल हिमपात देखा और समझा कि किसी ने इमारतों को चूने से पोत दिया है। उन्होंने बताया कि किस तरह उन्होंने बटलर में कई गिरजाघरों में व्याख्यान दिए थे और जब बालकों ने पूछा कि वे किस प्रकार के गिरजाघर थे, तो वे मुसकराने लगे और बोले, "मैं नहीं जानता।" और बालक भी उनके साथ हंसने लगे। वे उन्मुक्त भाव से भारत पर अंग्रेज शासन और भारतीय राजनीति के बारे में अपने संस्मरण सुनाते थे। उन्होंने लड़कों को बताया कि भारत को स्वतंत्र कराने में गांधीजी का उतना हाथ नहीं था, जितना सुभाषचन्द्र बोस का था। सुभाषचन्द्र बोस भारत से बाहर चले गये थे और उन्होंने आजाद हिन्द फौज की स्थापना की थी; उन्होंने हिटलर से समझौता किया था कि ब्रिटिश इंडिया के लिए युद्ध करने वाले भारतीय सैनिक यदि जर्मन सेना के सामने आत्मसमर्पण कर दें, तो उन्हें आजाद हिन्द फौज को सौंप दिये जाये, जिससे वे अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ सकें। और गांधीजी की अहिंसा से अधिक बोस का यह शक्ति-प्रदर्शन था, जिससे भारत को आजादी मिली।

वे वर्तमान शताब्दि के प्रारम्भ के अपने बचपन के बारे में बताते, जब सड़क की बत्तियाँ गैस से जलती थीं और कलकत्ता की धूल-भरी सड़कों पर घोड़ों से चलने वाली गाड़ियाँ और ट्राम-गाड़ियाँ ही सवारी के साधन थे। ये बातें लड़कों के लिए *भगवद्गीता* के आध्यात्मिक दर्शन की अपेक्षा अधिक सम्मोहक थीं और वे उनके प्रति अधिक स्नेह से आकृष्ट हो गये। उन्होंने अपने पिता गौर मोहन दे के बारे में बताया जो विशुद्ध वैष्णव थे। उनके पिता कपड़े के व्यवसायी थे और उनका परिवार कलकत्ते के अभिजात मल्लिकों से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित था। मल्लिकों के यहाँ कृष्ण का एक विग्रह था और प्रभुपाद के पिता ने बचपन में उन्हें अर्चना के लिए कृष्ण का एक विग्रह दिया था। प्रभुपाद मल्लिकों के मन्दिर के गोविन्द विग्रह की अर्चना का अनुसरण किया करते थे। बचपन में वे प्रति वर्ष अपनी रथयात्रा का समारोह मनाया करते थे, जो जगन्नाथ पुरी की विशाल रथयात्रा-समारोह के लघु संस्करण का अनुसरण जैसा होता था। उनके पिता के मित्र परिहास में कहते—"ओह, आपके घर में रथयात्रा समारोह चल रहा है और आप हम लोगों को आमंत्रित नहीं करते? यह कैसी बात है?" उनके पिता उत्तर देते, "यह तो बच्चों का खेल

है, बस और कुछ नहीं।" किन्तु पड़ोसी कहते, "आप बच्चों का खेल कहकर हम लोगों को दूर रखना चाहते हैं?"

प्रभुपाद प्रेमपूर्वक अपने पिता का स्मरण करते, जो कभी नहीं चाहते थे कि वे दुनियादारी में फंसे। उन्होंने उन्हें मृदंग बजाना सिखाया था और आगन्तुक संत-महात्माओं से वे प्रार्थना करते थे कि उनका पुत्र बड़ा होकर राधारानी का भक्त बने।

एक रात उन्होंने बताया कि अपने आध्यात्मिक गुरु से उनकी भेंट किस तरह हुई थी। उन्होंने बताया कि किस तरह उन्होंने अपना निजी औषध-व्यवसाय शुरू किया था, लेकिन किस तरह गृह त्याग दिया और १९५९ ई. में संन्यास ले लिया था। लड़कों को उत्सुकता तो थी, लेकिन जो बातें प्रभुपाद बताते, लड़के उनके बारे में इतने अनजान थे कि जब स्वामीजी के मुख से मृदंग या संन्यास जैसा कोई शब्द निकलता तो उन्हें पूछना पड़ता कि इसका अर्थ क्या है; और प्रभुपाद विषय से थोड़ा हटकर भारतीय मसालों, भारतीय ढोलों, यहाँ तक कि भारतीय स्त्रियों के विषय में भी इधर-उधर की बातें उन्हें बताने लगते। और वे जिस किसी चीज के बारे में बताते, उसे शास्त्र के प्रकाश से जरूर चमका देते। ऐसी चीजों को बताने में वे उनका परिसीमन नहीं करते थे, अपितु वास्तविक जिज्ञासु मिल जाने पर वे घंटो क्या, दिन-का-दिन, उनकी विशद् चर्चा में बिता देते थे।

• • •

दोपहर के समय प्रभुपाद के घर का सामने का कमरा भोजनालय में और संध्या-समय अन्तरंग पूजा के स्थान में बदल जाता था। प्रभुपाद ने बारह फुट वर्गाकार के इस सख्त लकड़ी के फर्श वाले कमरे को स्वच्छ और रिक्त रख छोड़ा था। उसका एकमात्र फर्नीचर था आंगन की ओर खुलने वाली दो खिड़कियों के बीच की दीवार से सटाकर रखा काफी टेबल। दोपहर में हर दिन यहाँ स्वामीजी के साथ एक दर्जन लोग भोजन करते थे। भोजन कीथ तैयार करता था, जो सवेरे का अपना सारा समय रसोई-घर में ही बिताता था।

प्रारम्भ में कीथ केवल स्वामीजी के लिए भोजन बनाता था। उसने स्वामीजी के तीन खाने वाले कुकर में दाल, चावल और सब्जी बनाने में दक्षता प्राप्त कर ली थी। जो कुछ भी बनता था, सामान्यत: उसमें से एक या दो मेहमानों के लिए भी बच जाता था। किन्तु शीघ्र ही जब मेहमानों की संख्या बढ़ने लगी, तो स्वामीजी ने कीथ भोजन की मात्रा बढ़ाने के लिए कह दिया। तीन खाने वाले छोटे कुकर का प्रयोग छोड़ना पड़ा और कीथ एक दर्जन लोगों के लिए भोजन तैयार करने लगा। भोजन करने वालों में रेफेल और डान, यद्यपि उन्हें स्वामीजी के प्रवचन में इतनी रुचि नहीं थी, प्रसाद ग्रहण करने के लिए हर

दिन ठीक समय पर पहुंच जाते और सामान्यतः अपने साथ स्टोरफ्रंट में घूमते फिरते पहुँचने वाले एक-दो मित्रों को भी ले आते। स्टीव कल्याण कार्यालय के अपने कार्य से ठीक समय पर टपक पड़ता। मोट स्ट्रीट की मण्डली आती और अन्य लोग भी आ ही जाते।

रसोई-घर उचित प्रकार के भारतीय मसालों से भरपूर था—ताजा मिर्च, ताजा अदरक, साबुत जीरा, हल्दी तथा हींग। कीथ ने भोजन बनाने की मुख्य विधियाँ सीख ली थीं और उन्हें चक को भी सिखा दिया था। वह उसका सहायक बन गया था। कुछ अन्य लड़के कीथ को देखने के लिए तंग रसोई-घर की ड्योढ़ी पर खड़े हो जाते, जबकि एक के बाद एक गोल-मटोल मोटी रोटी खुली आंच पर फुटबाल की तरह फूल उठती और फिर, भाप छोड़ती गरमागरम रोटियों के ढेर में अपना स्थान ले लेती।

जबकि महीन किस्म का बासमती चावल उबलकर मुलायम श्वेत-प्रफुल्लित रूप ग्रहण करता होता और सब्जी मंद-मंद पकती रहती, दोपहर के भोजन की तैयारी का चरम-बिन्दु 'छौंक' में आता। कीथ छौंक ठीक उसी तरह तैयार करता, जैसाकि स्वामीजी ने दिखाया था। वह अग्नि की लौ के ऊपर एक धातु की प्याली रखता जो शुद्ध घी से आधी भरी होती और तब उसमें जीरा डाल देता। जब जीरा लगभग काला हो जाता तब उसमें मिर्चें डाल देता और जब मिर्चें काली पड़ने लगतीं तो प्याली से दमघोटू धुआं उठने लगता; इस तरह छौंक तैयार हो जाता। कीथ चिमटे से खौलते, चटकते मिश्रण वाली प्याली को उठाता, जिससे किसी जादूगरनी की देगची की तरह भभक उठती होती और उसे खौलती दाल के पात्र के मुंह के पास ले आता पात्र का ढक्कन हल्के से खोलता, कलाई के झटके से छौंक उसमें डाल देता और तुरन्त ढक्कन बन्द कर देता।... अरे! छौंक और दाल के मिलने से विस्फोट होता, जिसका सोल्लास स्वागत दरवाजे के रास्ते से किया जाता। यह इस बात का संकेत होता कि भोजन बनकर तैयार हो गया है। यह अन्तिम क्रिया इतनी विस्फोटक होती कि एक बार उसके कारण बर्तन का ढक्कन उड़कर छत से जा टकराया जिससे जोर का धमाका हुआ और कीथ का हाथ थोड़ा-सा जल गया। कुछ पड़ोसी तीखे, दमघोटू धुंए की शिकायत करते। किन्तु भक्तों को यह अत्यन्त प्रिय लगता।

जब दोपहर का भोजन तैयार हो जाता, तब स्वामीजी स्नान-घर में जाकर मुंह-हाथ धोते और सामने के कमरे में आते। उनके मुलायम, गुलाबी रंग वाले पाँव सदैव नंगे रहते और केसरिया धोती नीचे टखने छूती रहती। वे कॉफी की मेज के पास खड़े हो जाते, जिस पर महाप्रभु चैतन्य और उनके पार्षदों का चित्र रहता और प्रभुपाद के सहयोगी उनकी दोनों ओर दीवार से सटकर खड़े हो जाते। कीथ एक बड़ी ट्रे में एक के ऊपर एक रखी दर्जनों चपातियाँ ले आता और चावल, दाल तथा सब्जी के पात्रों सहित उन्हें वेदी के सामने रख

देता। तब स्वामीजी भगवान् को भोग लगाने के लिए बाँग्ला भाषा में एक प्रार्थना करते और वहाँ उपस्थित सभी लोग एक-एक बाँग्ला शब्द बोलते हुए फर्श पर घुटने तथा सिर टेककर प्रार्थना में शामिल होते। वहाँ रखे गये भोज्य पदार्थों से महाप्रभु चैतन्य के चित्र को अर्पित अगरबत्ती से उठते सुंगधित धुएं के समान, भाप और सुंगधि उठती रहती और इधर स्वामीजी के अनुयायी लकड़ी के फर्श पर सिर झुकाए प्रार्थना के शब्द गुनगुनाते रहते।

तब स्वामीजी अपने मित्रों के साथ बैठकर उन जैसा ही प्रसाद ग्रहण करते। साथ में वे केवल एक केला और एक प्याला गर्म दूध लेते थे। वे केले को छीलकर प्याले के कोर से नीचे धकेलकर उसके टुकड़े-टुकड़े करते जाते और वे टुकड़े गर्म दूध में गिरते जाते।

प्रभुपाद का खुला आदेश था कि हर एक को अधिक से अधिक प्रसाद खाना चाहिए। इससे विनोद और पारिवारिकता की भावना पैदा होती थी। किसी को केवल बैठकर धीरे-धीरे चुगने की या कुतरने की इजाजत नहीं दी जाती थी। उन्हें उसी उत्साह से खाना पड़ता था, जैसाकि स्वामीजी बल देते थे। यदि वे किसी को देख लेते कि वह जी-भरकर नहीं खा रहा है, तो वे तुरन्त उसका नाम लेकर पुकारते और मुसकराकर प्रतिवाद करते, "आप क्यों नहीं खा रहे हैं ? प्रसाद ग्रहण कीजिए।" और वे हंस देते। "जब मैं जहाज से आपके देश आ रहा था" वे बोले, "तब मुझे विचार आता कि अमेरिकन ऐसा भोजन कैसे खाएंगे ?" और जब लड़के और अधिक भोजन के लिए अपनी प्लेटें आगे बढ़ाते, तो कीथ उन्हें दुबारा चावल, दाल, चपाती और सब्जी परोसता जाता।

आखिर, यह आध्यात्मिक था। प्रत्येक से अधिकाधिक खाने की आशा की जाती थी। यह आपको शुद्ध बनाएगा। यह आपसे उन्हें माया से मुक्त करेगा। इसके अतिरिक्त, यह उत्तम, स्वादिष्ट तथा मसालेदार भोजन होता। यह अमरीकी भोजन से अच्छा होता। यह कीर्तन जैसा था, उससे भी बढ़कर था। इस भोजन को ग्रहण कर के वे "ऊँचे" उठ जाते थे।

वे सब भारतीय शैली में दाहिने हाथ से खाते। कीथ और होवर्ड इसे पहले ही सीख चुके थे और ऐसे व्यंजनों का स्वाद भी ले चुके थे। किन्तु, जैसाकि उन्होंने स्वामीजी और श्रद्धालुओं-भरे कमरे के लोगों को बताया, इतना अच्छा भोजन उन्हें भारत में कभी नहीं मिला था।

स्टैनली नामक एक लड़का बिल्कुल युवा था और जब भोजन करता होता तो प्रभुपाद, एक स्नेही पिता की भाँति उसे बराबर देखा करते। स्टैनली की माँ प्रभुपाद से स्वयं मिली थी और उसने कहा था कि वह उसे आश्रम में रहने की अनुमति तभी देगी, यदि प्रभुपाद व्यक्तिगत रूप से उसकी देखभाल रखें। प्रभुपाद ने इसे स्वीकार कर लिया था। वे उसे बराबर प्रोत्साहित करते रहे, जब तक कि स्टैनली इतना पेटू नहीं बन गया कि

एक बार में दस चपातियाँ खाने लग गया। (वह और चपातियाँ भी खा सकता था, यदि स्वामीजी उसे रोक न देते) स्वामीजी ने स्टैनली के लिए दस चपातियों की सीमा बांध दी, किन्तु औरों के लिए उनका यही कहना था, "लो और लो।" जब प्रभुपाद खा चुकते, तो वे उठते और कमरे से चले जाते। कीथ सफाई में सहायता के लिए कुछ लड़कों को रोक लेता था; शेष चले जाते।

कभी-कभी रविवार के दिन स्वामीजी दावत के लिए स्वयं विशेष भारतीय व्यंजन तैयार करते।

स्टीव : *स्वामीजी स्वयं प्रसाद तैयार करते थे और तब उसे ऊपर की मंजिल के अपने सामने के कमरे में हमें परोसते थे। हम पंक्तियों में बैठते थे और मुझे याद है कि वे पंक्तियों के बीच नंगे पैर इधर-उधर आते-जाते रहते और विभिन्न पात्रों में से चम्मच द्वारा हम सब को प्रसाद परोसते जाते थे। वे पूछते कि हमें क्या चाहिए—क्या यह और चाहिए? और वे प्रसन्नतापूर्वक परोसते। वे व्यंजन सामान्य नहीं होते थे, अपितु मिष्ठान्न होते, मीठे चावल होते, कचौरियाँ होतीं। उनका स्वाद विशेष होता। हमारे पूरी प्लेट खा लेने के बाद भी वे आते और कहते—और लो।*

एक बार वे मेरे पास आये और पूछा कि मुझे और क्या चाहिए—क्या मुझे कुछ और मीठे चावल चाहिए? आध्यात्मिक जीवन की प्रारम्भिक भ्रान्ति-वश मैंने सोचा था कि जो वस्तु मुझे सबसे अधिक पसन्द हो उससे अपने आपको वंचित रखना चाहिए। इसलिए मैंने कुछ और सादा चावल मांगे। किन्तु वह "सादा" चावल भी तले पनीर के टुकड़ों से युक्त पीली किस्म का बढ़िया चावल था।

• • •

छुट्टी की रातों में स्वामीजी का आश्रम शान्त रहता। वे पूरी संध्या अकेले रहते, या तो वे *श्रीमद्भागवत* के अनुवाद और टंकण में लगे रहते या दस बजे रात तक एक-दो आगंतुकों से आराम से बातें करते रहते। किन्तु बैठक की रातों में—सोम, बुध तथा शुक्रवार को—आश्रम के हर कमरे में चहल-पहल रहती। प्रभुपाद अब अकेले नहीं थे। उनके नये अनुयायी उनकी सहायता कर रहे थे और हरे कृष्ण का कीर्तन करने तथा कृष्णभावनामृत के विषय में लोगों को जानकारी देने के उनके प्रयत्नों में सहयोग दे रहे थे।

अपने पिछले कमरे में प्रभुपाद *भागवत्* के अनुवाद का कार्य करते या छः बजे तक आगंतुकों से वार्ता करते। उसके बाद वे स्नान के लिए उठ जाते। कभी कभी स्नान-घर खाली होने तक उन्हें प्रतीक्षा करनी पड़ती। उन्होंने अपने युवा अनुयायियों को दिन में दो बार स्नान करने की आदत डाल दी थी और अब अपने स्नान-घर में औरों को साँझी बना

लेने के कारण कभी-कभी उन्हें असुविधा हो जाती थी।

स्नान के बाद प्रभुपाद अपने सामने के कमरे में आ जाते। जहाँ उनके एकत्रित अनुयायी उनकी चारों ओर बैठ जाते। प्रभुपाद पंचतत्त्व के अपने चित्र के सामने एक चटाई पर बैठ जाते। वे एक पात्र से आचमनी द्वारा जल की कुछ बूंदें अपनी 'बांयी' हथेली पर डालते और उस जल में वृन्दावनी मिट्टी की एक डली घिसकर गीला लेप बना लेते। तब वे दाहिने हाथ की अनामिका उंगली को बायीं हथेली के पीले लेप में डुबोकर माथे पर वैष्णव-तिलक लगाते। बाएं हाथ के अगूंठे और कनिष्ठिका के बीच निपुणतापूर्वक पकड़ हुए छोटे-से दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखते हुए वे हथेली के गीले लेप को अनामिका से लेकर अपने मस्तक पर खड़ा तिलक-चिह्न बनाते और तब चिह्न बनाते हुए गीले लेप को दाहिने हाथ की कनिष्ठिका से दो समानान्तर रेखाओं में विभाजित करते हुए, भौंहों के बीच से ऊपर केश-सीमा तक ले जाते। तब वे अपने शरीर के ग्यारह अन्य स्थानों पर भी गीले उसी लेप से चिह्न बनाते। इस बीच लड़के वहाँ बैठे हुए यह सब देखते रहते। कभी वे प्रश्न पूछते और कभी कृष्णभावनामृत विषयक अपनी जानकारियों के बारे में बात करते।

प्रभुपाद : *मेरे गुरु महाराज दर्पण के बिना ही तिलक लगा लेते थे।*

भक्त : *क्या वह ठीक बन जाता था?*

प्रभुपाद : *ठीक बनता हो या न बनता हो, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता था। पर हाँ, वह ठीक भी बन जाता था।*

इसके बाद प्रभुपाद गायत्री मंत्र का मौन जप करते थे। यज्ञोपवीत को दाहिने हाथ के अंगूठे में लपेटकर वे तनकर बैठ जाते थे। उनके होंठ धीरे-धीरे हिलते रहते थे। उनकी छाती की तरह उनके खुले कंधे और बाजू बिल्कुल दुबले-पतले थे। किन्तु उनका पेट, कुछ आगे को निकला हुआ, गोल था। उनका वर्ण किसी छोटे बालक जैसा चिकना और मुलायम था, सिवाय उनके चेहरे के, जिस पर वृद्धावस्था के चिह्न प्रकट हो गये थे। उनका हस्त-संचालन व्यवस्थित, अभिजातीय और फिर भी सुकुमार था।

प्रभुपाद ने दो पीतल की घंटियाँ बाएं हाथ से उठाईं और उनको बजाने लगे। उसके बाद महाप्रभु चैतन्य और उनके पार्षदों के चित्र के पास रखी मोमबत्ती से दो अगरबत्तियाँ जलाकर, वे उन्हें धीरे-धीरे वृत्ताकार में महाप्रभु के सामने घुमाने लगे। बाएं हाथ से घंटियाँ बजती रहीं। वे ध्यानावस्थित होकर चित्र का अवलोकन करते रहे और घंटियों को अटूट क्रम में बजाते हुए अगरबत्ती से सुगंधित धूम्र-वलयों का निर्माण करते रहे। लड़कों में से कोई भी नहीं समझ रहा था कि वे क्या कर रहे हैं, यद्यपि वे ऐसा हर शाम को करते थे। किन्तु यह एक धार्मिक अनुष्ठान था। इसका कुछ अर्थ था। इस अनुष्ठान को लड़के "घंटियाँ" कहने लगे।

घंटियों के बाद सोम, बुध और शुक्रवार को सामान्यतः सायंकालीन कीर्तन का समय होता था। कुछ भक्त नीचे आ चुके होते थे। वे आगंतुकों का स्वागत करते और स्वामीजी तथा उनके कीर्तन के बारे में बताते। लेकिन स्वामीजी के बिना कोई चीज शुरु नहीं हो सकती थी। गायन-वादन कोई भी जानता था और स्वामीजी के बिना कोई भी संकीर्तन का नेतृत्व नहीं कर सकता था। जब सात बजे वे प्रवेश करते, तभी संकीर्तन शुरू होता।

सद्यः स्नात, हाथ से बुने साफ-सुथरे भारतीय वस्त्र धारण किये, अपने बाहुओं और शरीर को बाण के आकार के वैष्णव चिह्नों से अलंकृत किये, प्रभुपाद कृष्ण को महिमान्वित करने हेतु एक दूसरे भावोन्मादक सुयोग का सामना करने के लिए अपने कक्ष से नीचे उतरते। उनका छोटा-सा मन्दिर असंस्कृत, अब्राह्मण, स्वच्छन्द युवा अमेरिकनों से ठसाठस भरा होता।

• • •

डान स्वामीजी की सहिष्णुता की कसौटी था। वह स्टोरफ्रंट में महीनों से रहता आया था, बिना कुछ किये-धरे और बिना अपनी आदतों को सुधारने का प्रयत्न किये। उसकी जबान में एक उल्लेखनीय कृत्रिमता थी : बात करने की बजाये वह शब्दों का उच्चारण इस प्रकार करता, मानो वह उन्हें किसी पुस्तक से पढ़ रहा हो। और वह शब्दों को कभी संक्षिप्त या सिकोड़कर नहीं बोलता था। ऐसा नहीं कि वह एक बुद्धिवादी था, वरन् लगता था कि किसी तरह उसने अपनी स्वाभाविक बोली को खत्म करने की योजना बना ली थी। उसकी बोली लोगों को बड़ी ऊटपटांग लगती थी, मानो वह बहुत सारे मादक द्रव्यों के सेवन का प्रतिफल हो। उसके कारण वह ऐसी हवा बाँधता, जैसे वह कोई सामान्य व्यक्ति न हो। और वह लगातार चरस का सेवन करता था, स्वामीजी के यह कहने पर भी कि जो लोग उनके साथ रह रहे थे, वे ऐसा न करें। कभी-कभी दिन में उसकी मित्र-लड़की स्टोरफ्रंट में आ जाती, वे साथ बैठते, घुलमिलकर बातें करते और कभी कभी एक दूसरे का चुम्बन लेते। किन्तु डान को स्वामीजी पसन्द थे। उसने एक बार उन्हें कुछ धन भी दिया था। उसे स्टोरफ्रंट में रहना पसन्द था और स्वामीजी ने इस पर कभी आपत्ति नहीं की थी।

लेकिन दूसरों को आपत्ति थी। एक दिन स्वामीजी में रुचि रखने वाले एक नवागन्तुक ने स्टोरफ्रंट में चरस के तीव्र गंध से घिरे डान को अकेले बैठे पाया। "तुम चरस पी रहे थे, पर स्वामीजी नहीं चाहते कि यहाँ कोई चरस पिए।" डान ने इनकार कर दिया, "मैं चरस नहीं पी रहा था।" "तुम सच नहीं बोल रहे हो।" उस लड़के ने डान की कमीज की जेब में हाथ डाल दिया और उसमें से चरस की कली निकाल ली। और डान ने उसके मुंह पर

थप्पड़ जमा दिया। कई लड़कों को इस का पता लग गया। वे निश्चित रूप से नहीं जानते थे कि क्या करना ठीक होगा : स्वामीजी क्या करेंगे ? यदि कोई चरस पीता है, तो आप क्या करेंगे ? यद्यपि किसी भक्त को ऐसा करने की अनुमति नहीं हैं, पर क्या कभी-कभी उसे अनुमति मिल सकती है ? उन्होंने इस मामले को स्वामीजी के समक्ष रखा।

प्रभुपाद ने इस मामले को बहुत गम्भीर माना और क्षुब्ध हो उठे, विशेषकर जो मारपीट हुई थी, उसके कारण। "उसने तुम्हें मारा ?" उन्होंने लड़के से पूछा, "मैं स्वयं नीचे जाऊँगा और उसके सिर पर ठोकर लगाऊँगा।" किन्तु प्रभुपाद ने इस पर फिर विचार किया और कहा कि डान को वहाँ से चले जाने को कह दिया जाये। डान इसके पहले ही जा चुका था।

दूसरे दिन सवेरे स्वामीजी की कक्षा में डान सामने के द्वार पर दिखाई दिया। अपने मंच से स्वामीजी ने डान की ओर बड़ी उद्विग्नता से देखा। लेकिन उनका पहला सरोकार इस्कान था। प्रभुपाद ने राय से, जो पास बैठा था, अनुरोध किया "उससे कहो कि यदि उसने चरस पी हुई है, तो वह अन्दर नहीं आ सकता। हमारा संघ..." प्रभुपाद की स्थिति एक चिन्ताकुल पिता की थी, जो अपने शिशु इस्कान के जीवन के बारे में भयभीत थे। राय द्वार तक गया और डान से बोला कि यदि तुम अन्दर आना चाहते हो, तो तुम्हें मादक द्रव्य-सेवन छोड़ना पड़ेगा। और डान वहाँ से चला गया।

• • •

रैफेल को आध्यात्मिक अनुशासन में रुचि नहीं थी। वह ऊँचे कद का, लम्बे सीधे भूरे बालों वाला युवक था, जो डान की तरह स्वामीजी से अलग रहते हुए कभी-कभार उनके यहाँ आता था। जब प्रभुपाद ने जप का समावेश किया और लड़कों को दिन में कीर्तन के लिए प्रोत्साहित किया, तो रैफेल उसमें शामिल नहीं हुआ। उसने कहा कि उसे अच्छा कीर्तन पसन्द हैं, लेकिन वह माला पर जप नहीं करता था।

एक बार स्वामीजी के कमरे की चाभी खो गई और लड़कों को ताला तोड़ना पड़ा। स्वामीजी ने रैफेल से दूसरा ताला लाने को कहा। कई दिन बीत गये। रैफेल स्टोरफ्रंट में बैठा रिमबाड पढ़ा करता, कस्बे में इधर-उधर भटकता रहा, लेकिन ताला लाने और लगाने का वक्त वह न निकाल पाया। एक दिन वह शाम को स्वामीजी के प्रकोष्ठ पर आया; बिना ताले के किवाड़ को खोलकर पीछे के कमरे में पहुँचा, जहाँ कुछ लड़के बैठे थे और कृष्णभावनामृत पर स्वामीजी की अनौपचारिक वार्ता सुन रहे थे। अपनी शंकाओं को व्यक्त करते और विक्षिप्त मन को प्रकट करते हुए रैफेल अचानक बोल उठा, "जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं नहीं जानता कि यहाँ क्या हो रहा है; मैं नहीं जानता कि यहाँ कोई बैंड बज

रहा है या क्या तमाशा चल रहा है?" कुछ भक्त उत्तेजित हो उठे; उसने उनके भक्तिपूर्ण मनोभाव में विक्षेप उत्पन्न किया था। "रैफेल बहुत स्पष्टवादी है," स्वामीजी ने मुसकराते हुए उत्तर दिया, मानो वे अपने पुत्र के व्यवहार की व्याख्या दूसरों के लिए कर रहे हों।

अन्त में रैफेल ने ताला लाकर लगा दिया। लेकिन एक दिन स्वामीजी के व्याख्यान के बाद वह उनके पास गया और उनके मंच की बगल में खड़ा हो गया और क्षुब्ध एवं अधीर स्वर में बोलने लगा, "मैं मन्दिर में बैठने और माला पर जप करने के लिए नहीं हूँ। मेरे पिता बाक्सर (मुक्केबाज) थे। मैं समुद्र तट पर दौड़ने और लम्बी सांस लेने के लिए हूँ...।" रैफेल अंग संचालन के साथ और अपनी जानी-मानी शिकायतों को वाणी देते हुए बोलता रहा कि वह क्या-क्या कर सकता है, बजाये इसके कि वह कृष्णभावनामृत को स्वीकार करे। एकाएक प्रभुपाद ने ऊँचे स्वर में उसे बीच में रोक दिया, "तो तुम वही करो! वही करो!" रैफेल अपने में सिमट गया, लेकिन वह वहीं रुका रहा।

• • •

बिल एप्स्टीन को स्वामीजी के साथ अपने सम्बन्ध पर गर्व था—यह सम्बन्ध निश्छल था। यद्यपि स्वामीजी के बारे में औरों को बताकर और उनसे मिलने के लिए उनके स्थान पर भेजकर, उसने स्वामीजी की सहायता की थी, उसे लगता कि स्वामीजी यह जानते हैं कि वह कभी भी उनका गम्भीर अनुयायी नहीं बन सकेगा। बिल भी, गलती से भी मन में यह विचार नहीं लाता था कि वह स्वामीजी का गम्भीर शिष्य बन सकता है। लेकिन प्रभुपाद को बिल की छोड़ो या स्वीकार करो की मनोवृत्ति से संतोष नहीं था। जब कई दिन किसी मित्र के यहाँ बिताने के बाद बिल स्टोरफ्रंट के द्वार पर फिर दिखाई देता, केवल इसलिए कि प्रवचन के बीच सिर पर कम्बल लपेटे वह सो जाये, तो प्रभुपाद इतने जोर से बोलने लगते कि बिल सो न पाता। कभी-कभी बिल चुनौती-भरा प्रश्न पूछ बैठता और प्रभुपाद उसका उत्तर देने के बाद पूछते, "क्या तुम सन्तुष्ट हो?" तब बिल स्वप्निल आँखो से ताकता और कहता, "नहीं।" तब प्रभुपाद और अधिक विस्तार से उत्तर देते और जोर से पूछते "क्या तुम अब सन्तुष्ट हो।" और बिल पुनः कहता—नहीं। इस तरह चलता रहता, जब तक बिल को हार माननी पड़ती और वह कहता—"हां, हां, मैं सन्तुष्ट हूँ।"

किन्तु स्टोरफ्रंट में होने वाले एक कीर्तन के मध्य खड़े होकर नाचने वालों में पहला व्यक्ति बिल था। कुछ अन्य लड़कों का मानना था कि वह अहं और आत्मप्रशंसा की भावना के वश नृत्य करना लगता था, यद्यपि उसकी बाहें ठीक वैसे ही फैली हुई थीं, जैसे नृत्य की मुद्रा में भगवान् चैतन्य के चित्रों में फैली होती थीं। किन्तु जब स्वामीजी ने उसे इस तरह नृत्य करते देखा, तो वे विस्मय-विस्फारित नेत्रों से बिल को देखते रह गये।

भाव-विह्वल होकर उन्होंने प्रशंसात्मक स्वर में कहा—"बिल ठीक महाप्रभु चैतन्य की तरह ही नृत्य कर रहा है।"

बिल घूम-भटककर आता तो कभी-कभी अपने साथ कुछ धन लाता। यद्यपि वह बहुत न होता, लेकिन वह उसे स्वामीजी को दे देता। उसे स्टोरफ्रंट में सोना पसन्द था। दिन वह सड़कों में बिताता था। दोपहर के खाने या कीर्तन या सोने के लिए स्टोरफ्रंट आ जाता था। वह सवेरे ही प्रस्थान कर देता था और जमीन पर सिगरेटों की खोज में लग जाता था। बिल के लिए स्वामीजी हिप्पी आन्दोलन के अंग थे और इसे, उसकी निगाह में, उन्होंने एक सच्चे व्यक्ति के रूप में आदर का स्थान बना लिया था। जब लड़कों ने स्वामीजी के प्रति श्रद्धायुक्त पूजा का भाव दिखाना आरम्भ किया (जैसा मन्दिर में उनके लिए ऊँचे आसन की व्यवस्था करके) तो बिल ने आपत्ति की; और जब लड़कों ने, जो स्वामीजी के साथ रहते थे, इस विषय में अधिक उत्साह, प्रतिस्पर्धा, यहाँ तक कि आपस में प्रतियोगिता भी दिखानी आरम्भ कर दी, तो बिल घृणा के कारण इससे विमुख हो गया। उसने तय कर लिया कि वह स्वामीजी की सहायता अपने ढंग से करता रहेगा और उसे मालूम था कि वह जो कुछ करता था, स्वामीजी उसकी सराहना करते थे। बस, वह मामले को यहीं छोड़ देना चाहता था।

• • •

कार्ल इयरजेन्स ने आवश्यकता पड़ने पर प्रभुपाद की सहायता की थी। उसने इस्कान के पंजीयन के कानूनी कार्य में सहायता की थी, इस्कान चार्टर पर एक ट्रस्टी के रूप में हस्ताक्षर किये थे और स्वामीजी को अपने घर में संरक्षण तक दिया था, जब डेविड द्वारा वे बोवरी लाफ्ट से निकाल दिए गये थे। लेकिन उन्हीं दिनों में जब स्वामीजी उसके घर में उसके और इव के साथ रहते थे, ऐसा तनाव पैदा हुआ कि वह तब से गया ही नहीं। कार्ल स्वामीजी को पसन्द करता था; भारत के एक सच्चे संन्यासी के रूप में उनका आदर करता था, लेकिन वह उनके दार्शनिक विचारों को स्वीकार नहीं करता था। कृष्ण और आत्मा के विषय में उनके प्रवचन सुन्दर थे, लेकिन मादक द्रव्यों और यौनाचार के त्याग का विचार उसकी दृष्टि में सीमा का अतिक्रमण था। अब प्रभुपाद अपने नये स्थान में जब गये थे और कार्ल ने सोचा कि उनकी सहायता के कार्य में उसने अपना कर्तव्य निभाया था और उन्हें अब उसकी आवश्यकता नहीं रह गई है। यद्यपि कार्ल ने इस्कान के पंजीयन में उनकी सहायता की थी, लेकिन वह उसमें सम्मिलित नहीं होना चाहता था।

कार्ल की दृष्टि में सेकंड एवन्यू के कीर्तन बहुत अधिक सार्वजनिक थे; उनमें आत्मीयता का वह वातावरण नहीं था, जिसका आनन्द स्वामीजी के साथ वह बोवरी में

प्राप्त कर चुका था। अब श्रोताओं की संख्या बहुत बढ़ गई थी और उनमें अनुशासनहीन उच्छृंखलता का ऐसा तत्त्व प्रविष्ट हो गया था, जो बोवरी पर कभी नहीं दिखाई दिया था। कुछ अन्य पुराने साथियों के समान कार्ल को इस्कान में शामिल होने में संकोच और अनिच्छा का अनुभव हुआ। सेकंड एवन्यू की सड़क के दृश्य की तुलना में बोवरी लाफ्ट की चौथी मंजिल पर होने वाली पहले की सभाएँ अधिक गूढ़ार्थ वाली प्रतीत होती थीं, जैसे एकांत ध्यान-सभाएँ हों।

• • •

कैरोल बेकर भी अधिक शान्त कीर्तन चाहती थी। उसका विचार था कि लोग अपनी वैयक्तिक कुण्ठाओं को उच्छृंखल गायन और नृत्य के माध्यम से निकलने की कोशिश कर रहे थे। वह एक-दो बार जब भी सेकंड एवन्यू में शाम के कीर्तन में सम्मिलित हुई, तो वह समय 'घोर तनाव का समय' था। एक बार किशोरों का एक झुंड हँसी उड़ाता और चिल्लाता हुआ स्टोरफ्रंट में घुस आया था कि "ओह! यह क्या ढोंग चल रहा है!" उसे बराबर भय लगा रहता कि किसी भी क्षण भारी पत्थर का टुकड़ा कोई बड़ी खिड़की तोड़ता हुआ अन्दर आ जाएगा। जो भी हो, उसका मित्र-लड़का इस्कान में रुचि नहीं रखता था।

• • •

जेम्स ग्रीन बहुत उलझन में था। उसने देखा कि अधिकतर नवागन्तुक लोग स्वामीजी के साथ बड़ी सच्चाई से प्रतिबद्ध होते जा रहे हैं, किन्तु वह वैसा नहीं कर पा रहा है। उसके मन में स्वामीजी के और उनके नये आन्दोलन के प्रति कोई दुर्भाव नहीं था। किन्तु वह उनसे अलग रहना बेहतर समझता था।

• • •

रार्बट नेल्सन, जो प्रभुपाद का अपटाउन से पुराना मित्र था, उनके प्रति अपनी सद्भावनाओं से कभी विचलित नहीं हुआ, किन्तु वह हमेशा अपने ही ढंग से चलता रहा और उसने कभी भी किसी कठोर अनुशासन को स्वीकार नहीं किया। जो भी हो, लगभग वे सभी लोग, जिन्होंने प्रभुपाद की अपटाउन और बोवरी में सहायता की थी, उनके आध्यात्मिक संघ को स्थापित करने के बाद उनका साथ देने को तैयार नहीं थे, जो उनके २६ सेकंड एवन्यू में पहुँचने के लगभग तुरन्त बाद ही स्थापित हो गया था। नये लोग प्रभुपाद की सहायता के लिए आगे आ रहे थे और कार्ल, जेम्स, कैरोल और उनके समान

दूसरों को ऐसा लगा कि अब उनका स्थान नये लोग ले रहे हैं और स्वामीजी के प्रति उनके दायित्व का अन्त हो रहा है। एक तरह से यह प्रहरी-परिवर्तन था। यद्यपि प्रभुपाद के पुराने प्रहरी अब भी उनके शुभचिन्तक थे, लेकिन अब वे दूर हटते जा रहे थे।

• • •

ब्रूस शार्फ अभी अभी न्यूयार्क विश्वविद्यालय से स्नातक परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ था और उसने किसी पद पर नियुक्ती के लिए प्रार्थना-पत्र दिया था। एक दिन उसके पुराने कक्ष सहवासी मित्र ने उसे स्वामीजी के बारे में बताया, जिनके सेकंड एवन्यू निवास पर वह हो आया था। "वहाँ लोग गाते हैं," ब्रूस के मित्र ने कहा, "और वहाँ वे बड़ी दूर की बातें करते हैं और नृत्य करते हैं। और एलन गिन्सबर्ग भी वहाँ था।" स्वामी को समझना कठिन है, ब्रूस के मित्र ने बताया और इसके अलावा स्वामी के अनुयायी उनकी बातों को टेप रिकर्डर पर टेप करते हैं। "वे इतना बड़ा टेप रेकर्डर क्यों रखते हैं? यह तो कोई आध्यात्मिक बात नहीं हुई।" लेकिन ब्रूस की रुचि जाग गई।

वह पहले से ही भारतीय संस्कृति का भक्त था। चार वर्ष पूर्व जब वह केवल २० वर्ष का था, तो ग्रीष्मावकाश में एक अमरीकन मालवाहक जहाज पर परिचारक का कार्य कर चुका था। और भारत गया था, जहाँ उसने कई मन्दिरों के दर्शन किये थे, शिव और गणेश के चित्र तथा गांधीजी पर पुस्तकें खरीदी थीं और अनुभव किया था, मानो वह भारतीय संस्कृति का अंग हो। जब वह न्यूयार्क विश्वविद्यालय लौटा, तो उसने भारत के विषय में और अधिक अध्ययन किया और अपने इतिहास पाठ्यक्रम के लिए गांधी पर एक प्रबन्ध लिखा। वह भारतीय भोजनालयों में भोजन करने लगा था और भारतीय चित्र देखने तथा भारतीय संगीत कार्यक्रमों में जाने लगा था। वह *भगवद्गीता* का अध्ययन करने लगा था। उसने मांस-भक्षण करना भी छोड़ दिया था। उसकी योजना भारत लौटकर कालेज की उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने और फिर अमेरिका लौटकर प्राच्य धर्मों का अध्यापन करने की थी। किन्तु इस बीच वह एल.एस.डी. पर प्रयोग कर रहा था।

• • •

चक बार्नेट अठारह वर्ष का था। उसकी तलाकशुदा माँ हाल में ही ग्रीनविच विलेज आ गई थी, जहाँ वह न्यूयार्क विश्वविद्यालय के अन्तर्गत मनोविज्ञान का अध्ययन कर रही थी। चक अपनी माँ के घर से लोअर ईस्ट साइड में बारहवीं सड़क के एक मकान में आ गया था, जहाँ उसके पड़ोस में एलेन गिन्सबर्ग और हिप्पी समुदाय के अन्य कवि और संगीतकार रहते थे। वह एक प्रगतिशील जाज वंशीवादक था, जो नगर की कई

व्यावसायिक मंडलियों के साथ काम करता था। वह छ साल से हठयोग का अभ्यास करता आया था और कुछ समय पहले से एल.एस.डी. पर प्रयोग करने लगा था। उसे कमलों और संकेन्द्रीय वृत्तों के दर्शन होते थे, लेकिन नशा उतरने के बाद वह ऐन्द्रियता में पूरी तरह से लिप्त हो जाता था। चक का एक घनिष्ठ मित्र हाल में ही ग्रीष्मऋतु में एकाएक समलिंगकामी बन गया था, फलस्वरूप चक घृणा से भर गया था और सनकी हो गया था। किसी ने चक को बताया कि कोई भारतीय स्वामी नगर के पुराने इलाके में सेकंड एवन्यू में रह रहे हैं। अतः एक दिन अगस्त में वह पुराने मैचलेस गिफ्ट्स भंडार की खिड़की के सामने आया।

• • •

स्टीव गारिनो, जो न्यूयार्क के एक अग्निशामक कार्यकर्ता का लड़का था, इसी नगर में पलकर बड़ा हुआ था और उसने ब्रुकलिन कालेज से १९६१ ई. में स्नातक की उपाधि प्राप्त की थी। अपने पिता से प्रभावित होकर वह नौसेना में भरती हो गया था। वहाँ वह दो वर्ष तक फौजी अनुशासन झेलता रहा और हमेशा उस दिन की प्रतीक्षा करता रहा जब उसे लोअर ईस्ट साइड में अपने मित्रों से फिर मिलने की स्वतंत्रता प्राप्त होगी। अन्त में राष्ट्रपति केनेडी की मृत्यु के कुछ महीनों बाद वह सम्मानपूर्वक सेवा निवृत्त कर दिया गया। वह अपने माता-पिता से मिलने तक नहीं गया और सीधे लोअर ईस्ट साइड के लिए चल पड़ा, जो उस समय तक उसके मन में बड़ी स्पष्टता से संसार का सबसे अधिक रहस्यवादी स्थान बन गया था। फ्रांज काफ्का और दूसरों के साहित्य से प्रभावित होकर वह कहानियाँ और छोटे उपन्यास लिखने लगा था और "चेतना पर शोध और प्रयोग" के लिए वह एल.एस.डी. लेने लगा था। जाज संगीतज्ञ जान काल्ट्रेन के एक रेकॉर्ड 'ए लव सुप्रीम' ने स्टीव को यह सोचने को प्रोत्साहित किया कि ईश्वर का वास्तव में अस्तित्व है। जीवन-यापन-भर के लिए पैसा कमाने के उद्देश्य से स्टीव ने जन-कल्याण कार्यालय में नौकरी कर ली थी। एक दिन तीसरे पहर खाने के अवकाश में सेकंड एवन्यू में घूमते हुए उसने देखा कि मैचलेस गिफ्ट्स स्टोर की खिड़की में कागज का एक छोटा-सा टुकड़ा लगा था जिसमें घोषणा थी, " *भगवद्गीता* पर भाषण, ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी।"

• • •

चक: *अन्त में मैंने सेकण्ड एवन्यू और फर्स्ट स्ट्रीट ढूंढ निकाली और खिड़की से झांककर मैंने देखा कि अन्दर संकीर्तन चल रहा था और कुछ लोग दीवार से लगे बैठे थे। मेरी बगल में फुटपाथ से कुछ मध्यवर्गीय लोग अन्दर झांक रहे थे और हीं-हीं किये जा*

रहे थे। मैं उनकी ओर मुड़ा और हाथ जोड़कर मैंने पूछा, "क्या यह वही स्थान है जहाँ एक स्वामीजी रहते हैं?" हीं-हीं करते हुए वे बोले, "तीर्थयात्री, आपकी तलाश पूरी हो गई है।" इस उत्तर से मुझे आश्चर्य नहीं हुआ, क्योंकि मुझे लगा कि यह सच है।"

ब्रूस और चक, एक दूसरे से अनजान थे और एक दूसरे से केवल दो ब्लाकों की दूरी पर रहते थे। अपने मित्र के सुझाव पर ब्रूस भी स्टोरफ्रंट पहुँचा।

ब्रूस : मैं हरे कृष्ण की खोज में था। अपना स्थान छोड़कर मैं एवन्यू बी पहुँचा। तब मैंने पूरा रास्ता तय करके हूस्टन स्ट्रीट पहुँचने का निश्चय किया। जब मैं फर्स्ट स्ट्रीट पहुँचा, तब दाहिनी ओर मुड़ गया और फर्स्ट स्ट्रीट पर चलता हुआ सेंकड एवन्यू पहुँच गया। पूरे फर्स्ट स्ट्रीट में मैं पोर्टोरीकन सामान के स्टोर देखता आया और तब एक गिरजाघर आया, जहाँ हर व्यक्ति खड़ा था, जोर-जोर से गा रहा था और तंबूरा बजा रहा था। उसके बाद फर्स्ट स्ट्रीट में मैं जब और आगे बढ़ा तो मेरे मन में ऐसा भाव उदय हुआ कि मैं संसार त्याग रहा हूँ। ठीक उसी तरह का भाव जो उस समय उदय होता है जब कोई हवाई अड्डे की ओर हवाई जहाज पकड़ने जाता होता हैं। मैंने सोचा कि, "मैं अब अपना एक अंश पीछे छोड़ रहा हूँ और मैं किसी नई जगह जा रहा हूँ।"

लेकिन जब मैं सेंकड एवन्यू पहुँचा, तो मैं हरे कृष्ण नहीं पा सका। वहाँ एक गैस स्टेशन था; उसके आगे चलता हुआ मैंने एक छोटे से स्टोरफ्रंट के पास से गुजरा। वहाँ केवल मैचलेस गिफ्ट्स का संकेत था। तब मैं पीछे लौटा, फिर स्टोर पर आया। उसकी खिड़की में एक श्याम-श्वेत संकेत मिला, जिस पर लिखा था—भगवद्गीता पर प्रवचन। मैं स्टोरफ्रंट में घुसा और वहाँ जूतों का ढेर देखा। मैंने अपने जूते उतारे और अन्दर जाकर पीछे बैठ गया।

स्टीव : मेरी ऐसी धारणा थी कि यह ऐसा वर्ग है, जो सुप्रतिष्ठित हो चुका है और जिसकी बैठकें कुछ समय से होती आ रही हैं। मैं अन्दर पहुँचा और फर्श पर बैठ गया और एक लड़का, जिसने अपना नाम राय बताया, मेरे प्रति बहुत शिष्ट और मैत्रीपूर्ण लगा। वह उन लोगों जैसा प्रतीत हुआ, जिन्हें इन बैठकों का अनुभव हो चुका था। उसने मेरा नाम पूछा और मुझे बड़ी राहत हुई।

एकाएक स्वामीजी बगल के दरवाजे से कमरे में आये। वे केसरी रंग की धोती पहने थे; कमीज नहीं पहने थे; वह एक लंबे दुपट्टे की भाँति कपड़े का टुकड़ा सा लगता था, जो उनके दांये कंधे के ऊपर एक गांठ में बंधाया। उनकी भुजाएँ, बाँया कंधा और छाती का कुछ भाग खुला था। जब मैंने उन्हें देखा, तो मेरे मन में बुद्ध का विचार आया।

ब्रूस : फर्श पर लगभग १५ लोग बैठे थे। लम्बी दाढ़ी वाला एक व्यक्ति सामने दाहिनी ओर दीवार से टिका बैठा था। कुछ समय बाद दूसरी ओर का दरवाजा खुला और

स्वामीजी प्रविष्ट हुए। जब वे अन्दर आये तो उन्होंने यह देखने के लिए सिर घुमाया कि श्रोताओं में कौन कौन लोग थे। तब उन्होंने सीधे मुझे देखा। हमारी आँखे मिलीं। ऐसा लगा मानो वे मुझे आंक रहे हों। मेरे मन में ऐसा भाव जगा मानो मुझे देखते हुए स्वामीजी का पहली बार फोटो खींचा जा रहा हो। थोड़ी देर का विराम हुआ। तब वे बड़ी शालीनता से मंच पर चढ़कर बैठ गये और उन्होंने मंजीरों का एक जोड़ा उठाया और कीर्तन आरम्भ कर दिया। यह कीर्तन एक ऐसी वस्तु थी, जिसने मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया। यह मेरे अब तक सुने संगीत में से सर्वोत्तम था। और यह अर्थपूर्ण था। आप उस पर सचमुच ध्यान केन्द्रित कर सकते थे और "हरे कृष्ण" शब्दों की पुनरावृत्ति से आपको आनन्द की प्राप्ति हो सकती थी है। मैंने उसे तुरन्त आध्यात्मिक अभ्यास के रूप में स्वीकार कर लिया।

चक : मैं स्टोरफ्रंट में दाखिल हुआ। वहाँ सख्त फर्श पर बिछी एक घास की चटाई पर एक व्यक्ति बैठा था, जो पहली दृष्टि में, मुझे वह न पुरुष लग रहा था और न स्त्री। किन्तु जब उन्होंने मेरी ओर देखा तो मैं उनसे आँखे मिलाकर उनकी ओर नहीं देख सका। उनकी आँखों में ऐसा तेज और जगमगाहट थी! उनके शरीर का वर्ण स्वर्णिम था, गाल गुलाबी थे। उनके कान बड़े बड़े थे, जो उनके चेहरे का एक भाग थे। वे तीन लड़ियों की माला पहने थे। एक लड़ी गले तक थी, दूसरी गले के कुछ नीचे तक और तीसरी उनके वक्ष-स्थल तक पहुँचती थी। उनका ललाट विशाल था, जो उनकी चमकदार आँखों के ऊपर उभरा था। उनके माथे में बहुत-सी झुर्रियाँ थीं। उनकी बाहें पतली और लम्बी थीं। उनका मुख सुसम्पन्न, भरा-पूरा, श्याम अरुण और मुसकान-रंजित था। उनके दाँत उनके नेत्रों से अधिक चमकदार थे। वे पालथी मारे बैठे थे; ऐसा मैंने कभी किसी योग की पुस्तक में नहीं देखा था और न किसी योगी को ऐसा आसन लगाते देखा था। यह बैठने की मुद्रा थी। उनका दाहिना पैर उनकी जांघ के ऊपर से होता हुआ बाएं नितम्ब के पास निकला था और एक घुटना ठीक उनके सामने दूसरे घुटने पर टिका था। उनकी प्रत्येक अभिव्यक्ति और चेष्टा उन सभी व्यक्तियों से भिन्न थी, जिन्हें मैंने इसके पहले कभी भी देखा था। मुझे लगा कि इनका भी कुछ अर्थ है, जिसे मैं नहीं जानता था; उनका उद्भव ऐसी संस्कृति और ऐसे मनोभाव से था, जो इस संसार से परे की वस्तु थे। उनकी एक तरफ एक तिल था और उनकी एड़ी पर एक विशेष प्रकार की गांठ थी, ऐसी गांठ जो पंजा लड़ाने वाले कुशल व्यक्ति की अंगुली के पोर पर उभरने लगती है। वे बिना सिला वस्त्र धारण किये थे, जो केसरिया रंग में रंगा था। उनकी प्रत्येक वस्तु मोहक थी। अपनी समग्र तेजस्विता में वे कमरे में बैठे नहीं लगते थे, वरन् जैसे किसी अन्य स्थान से उनका प्रक्षेपण हुआ हो। उनका वर्ण इतना चमकदार था कि वह बहुरंगी चलचित्र लगता था और फिर भी

वे साक्षात् वहाँ आसीन थे। मैंने उन्हें बोलते हुए सुना। वे सीधे मेरे सम्मुख बैठे थे। फिर भी लगता था कि यदि मैं उनका स्पर्श करने के लिए बढ़ूं तो वे वहाँ बैठे नहीं मिलेंगे। इसके साथ ही यह भी था कि उनको देखना किसी सूक्ष्म या अमूर्त वस्तु को अनुभव करने के समान नहीं था, वरन् एक अत्यन्त भावप्रवण व्यक्ति की उपस्थिति का अनुभव था।

• • •

स्टोरफ्रंट में पहली बार आने के बाद चक, स्टीव और ब्रूस में से हर एक को स्वामीजी से उनके ऊपर के कमरे में मिलने का अवसर प्राप्त हुआ।

स्टीव : *मेरा दोपहर के खाने का अवकाश था और मुझे शीघ्र कार्यालय वापस पहुँचना था। मैं गरमी का कामकाजी सूट पहने था। मैंने ऐसी योजना बनाई थी कि इतना समय बचा रहे कि मैं स्टोरफ्रंट जाऊँ, कुछ पुस्तकें खरीदूँ, दोपहर का खाना खाऊँ और काम पर लौट आऊं। स्टोरफ्रंट पर स्वामीजी के एक अनुयायी ने कहा कि मैं ऊपर जाकर स्वामीजी से मिल सकता था। मैं ऊपर उनके कमरे में गया और देखा कि स्वामीजी कुछ लड़कों के साथ बैठे हैं। वे जो कुछ कह रहे थे, उसमें मेरे बोलने से बाधा हुई होगी, लेकिन मैंने पूछ लिया कि क्या मैं श्रीमद्भागवत् के तीनों खंड खरीद सकता हूँ। अनुयायियों में से एक ने प्रभुपाद के आसन के सामने की अलमारी में से पुस्तकें निकालीं। मैंने पुस्तकें ले लीं—वे एक विशेष रंग की थीं, जो अमेरिका में प्रायः नहीं दिखाई देता; वह रंग लाली लिए का सहज रंग था, ईंट से मिलता-जुलता। मैंने उनका मूल्य पूछा। उसने कहा प्रत्येक का मूल्य छह डालर था। मैंने अपने पर्स से बीस डालर निकालकर उसे दिए। केवल वही एक भक्त ऐसा लगता था, जिससे मैं मूल्य पूछ सकता या जिसको भुगतान कर सकता था, क्योंकि भक्तों में अन्य कोई स्वामीजी के प्रतिनिधि के रूप में इस काम के लिए आगे नहीं आया। वे केवल बैठे रहे और उनका प्रवचन सुनते रहे।*

"ये पुस्तकें शास्त्रों पर टीकाएँ हैं?"—मैंने यह जताने की कोशिश करते हुए पूछा कि मैं पुस्तकों के बारे में कुछ ज्ञान रखता था। स्वामीजी बोले—हाँ, ये मेरी टीकाएँ हैं। बैठे हुए, सहज मुसकराते हुए स्वामीजी बहुत आकर्षक लग रहे थे। वे बहुत बलशाली और स्वस्थ लगते थे। जब वे मुसकराते तो उनके सभी दांत बहुत सुन्दर लगते थे। और उनके नासिका-रन्ध्रों में अभिजातीय ढंग का स्फुरण होता था। उनका चेहरा भरापूरा और शक्तिशाली लगता था। वे भारतीय परिधान पहने थे और जब पालथी मारकर बैठे थे, तो चिकनी त्वचा वाली उनकी टांगे भीड़ी की दिख रही थीं। उन्होंने व कमीज या कुर्ता नहीं पहन रखा था। किन्तु उनके शरीर का ऊपरी भाग एक भारतीय कपड़े की शाल से ढका था। उनके अंग बिल्कुल पतले थे, लेकिन उनका पेट कुछ बाहर निकला हुआ था।

जब मैंने देखा कि पुस्तकों की बिक्री का काम स्वामीजी को स्वयं देखना पड़ता था, तो मैंने उन्हें परेशान करना ठीक नहीं समझा। मैं जल्दी में बोला कि मेरे बीस डालर में से शेष पैसे कृपया आप रख लें। मैंने पुस्तक के तीनों खंड किसी थैले में लपेटे बिना, ले लिए और जाने की तैयारी में मैं खड़ा रहा। तभी स्वामीजी बोले, "बैठ जाओ," उनका यह भी संकेत था कि मैं उनके सामने औरों की तरह बैठूँ। उन्होंने "बैठ जाओ" एक भिन्न स्वर में कहा था। उनका यह स्वर भारी था और व्यक्त करता था कि अब पुस्तकों के विक्रय का काम समाप्त हो गया था और मुझे औरों के साथ बैठकर उनका प्रवचन सुनना चाहिए। वे मुझे एक महत्त्वपूर्ण आमंत्रण दे रहे थे कि मैं भी उन लोगों जैसा बन जाऊँ, जो मुझे ज्ञात था, दिन में उनके साथ कई घंटे बिताते थे, जबकि प्रायः मैं अपने काम पर होता था और उनके यहाँ आने में असमर्थ था। मुझे उनके उस अवकाश से ईर्ष्या हुई, जिसमें वे स्वामीजी से इतना अधिक सीख सकते थे और उनके साथ बैठकर आत्मीयतापूर्वक बात कर सकते थे। क्रय-विक्रय का कार्य समाप्त करके और मुझे बैठने के लिए कहकर, वे समझ रहे थे कि मुझे उनके प्रवचन सुनने की आवश्यकता थी और संसार में मेरे लिए इससे अधिक अच्छा कोई कार्य नहीं था कि मैं सब कुछ करना छोड़कर उनका प्रवचन सुनूँ। लेकिन मुझे अपने कार्यालय वापस पहुँचना था। मैं उनसे तर्क नहीं करना चाहता था, किन्तु मैं शायद रुक भी नहीं सकता था। "खेद है, मुझे जाना है," मैंने निश्चयात्मक स्वर में कहा। "मैं केवल दोपहर के खाने के अवकाश पर हूँ।" यह कहता हुआ मैं दरवाजे की ओर बढ़ चला। स्वामीजी खुलकर मुसकराने लगे। उस समय वे बड़े मोहक और प्रसन्न लग रहे थे। वे इस बात की सरलता करते प्रतीत हुए कि मैं एक कामकाजी आदमी था और अपने काम में मुझे आगे बढ़ना था। मैं उनके पास इसलिए नहीं आया था कि मैं बेरोजगार था और मेरे पास कुछ करने को या कहीं जाने को नहीं था। मेरे क्रियाशील मनोभाव को सराहते हुए उन्होंने मुझे जाने की अनुमति दे दी।

चक : स्टोरफ्रंट के एक भक्त ने मुझे ऊपर जाने और स्वामीजी से एकांत में मिलने के लिए आमंत्रित किया। स्टोरफ्रंट से मुझे एक हाल में ले जाया गया और फिर वहाँ से एकाएक एक छोटे-से सुन्दर बगीचे में ले जाया गया। वहाँ एक पिकनिक टेबल था, चिड़िया-घर था, चिड़ियों का स्नान-घर था और फूल की क्यारियाँ थीं। बगीचे में से जाने के बाद हम एक मध्यवर्गीय मकान पर पहुँचे। सीढ़ियाँ चढ़कर हम एक कमरे में दाखिल हुए, जहाँ किसी भी प्रकार का फर्नीचर नहीं था। केवल उसकी सफेद दीवारें थीं और लकड़ी का फर्श। भक्त ने मुझे सामने का कमरा पार करने के बाद एक दूसरे कमरे में दाखिल कराया, जहाँ स्वामीजी विराज रहे थे। वे अपने महिमामय आध्यात्मिक वैभव में दीवार से सटे एक तकिये का सहारा लिए, एक पतली सूती दरी पर, जो छोटे-छोटे

हाथियों के चित्रों से अंकित एक कपड़े से ढकी थी, आसीन थे।

एक रात ब्रूस वैली को साथ लिए घर आया और उसने वैली को बताया कि वह भारत जाकर वहाँ प्राच्य साहित्य का प्रोफेसर बनने में रुचि रखता था। "भारत क्यों जाते हो?" वैली ने पूछा। "भारत तो यहाँ आ गया है। स्वामीजी हमें वे प्रामाणिक वस्तुएँ यहीं सिखा रहे हैं। भारत क्यों जाते हो?" ब्रूस को वैली की बात सार्थक लगी; इसलिए उसने भारत जाने की अपने चिर-पोषित विचार को तब तक के लिए छोड़ देने का निश्चय किया, जब तक वह स्वामीजी से मिलता रह सकता था।

ब्रूस : *मैंने स्वामीजी से व्यक्तिगत रूप में बात करने का निश्चय किया, इसलिए मैं स्टोरफ्रंट गया। मैंने पता किया कि वे पीछे के मकान के एक कमरे में रहते हैं। एक लड़के ने मुझे नम्बर बताया और कहा कि मैं जाकर स्वामीजी से बात कर सकता था। उसने कहा, "हाँ, अभी जाइए।" इसलिए मैंने स्टोरफ्रंट में से चलकर गया, उसके आगे एक छोटा-सा आंगन था, जिसमें कुछ पौधे लगे थे। न्यूयार्क में आमतौर से आंगन नहीं होता, जिसमें हरियाली हो। पर यह तो बड़ा आकर्षक था। और उस आंगन में एक लड़का था, जो पिकनिक मेज पर टाइप कर रहा था और वह बहुत आध्यात्मिक और समर्पित लग रहा था। मैं शीघ्रतापूर्वक ऊपर चढ़ गया और २-सी नंबर वाले कमरे की घंटी बजाई। थोड़ी देर में दरवाजा खुला और सामने स्वामीजी खड़े थे। "कहिए।" उन्होंने कहा। मैंने कहा, "मैं आपसे बात करना चाहता हूँ।" उन्होंने दरवाजे को और अधिक खोल दिया, स्वयं पीछे हट गये और कहा, "हाँ, आ जाइए।" हम दोनों एक साथ उनके बैठने के कमरे में गये और आमने-सामने बैठ गये। वे धातु के अपने बक्से की डेस्क के पीछे एक बहुत पतली चटाई पर बैठे, जिस पर कम्बल की तरह का ऊनी आवरण पड़ा था, जिसके किनारे जीर्ण-शीर्ण हो चुके थे और जो हाथी के चित्रों से अलंकृत था। उन्होंने मेरा नाम पूछा। मैंने कहा—ब्रूस। उन्होंने टिप्पणी की, "आह! अंग्रेज काल में भारत में एक लार्ड ब्रूस था।" उन्होंने आगे लार्ड ब्रूस के बारे में कुछ बताया कि वह सेना का जनरल था और कुछ लड़ाइयों में उसने भाग लिया था।*

मुझे लगा कि मुझे स्वामीजी से बात करनी है और उन्हें अपनी कहानी बतानी है और मैंने पाया कि वे सचमुच मेरी बात सुनने को उत्सुक थे। उनके कमरे में उनके साथ बैठने में मुझे बड़ी आत्मीयता का अनुभव हो रहा था। और वे सचमुच मेरे बारे में सुनना चाहते थे।

जब हम बात कर रहे थे, तो उन्होंने मेरे पीछे की ओर दीवार के ऊपरी भाग पर दृष्टि डाली और वे महाप्रभु चैतन्य के विषय में बता रहे थे। जिस तरह उन्होंने दीवार पर दृष्टि डाली, उससे स्पष्ट था कि वे किसी चित्र को या किसी विशेष वस्तु को देख रहे थे, लेकिन

उनकी दृष्टि में गहरे प्रेम का भाव था। मैं यह जानने के लिए मुड़ा कि वह क्या था, जिसे वे इस तरह देख रहे थे। तब मैंने भूरे फ्रेम में मढ़ा चित्र देखा—महाप्रभु चैतन्य कीर्तन में नृत्यरत थे।

• • •

प्रभुपाद से मिलने का तात्पर्य अनिवार्यत: दार्शनिक विचार-विमर्श था।

चक : मैंने उनसे पूछा—"क्या आप मुझे राजयोग सिखा सकते हैं ?" "ओह," वे बोले, "यह भगवद्गीता है।" उन्होंने गीता की एक प्रति मुझे दी। "छठे अध्याय के अन्तिम श्लोक को देखो और पढ़ो।" मैंने ऊँचे स्वर में अनुवाद पढ़ा "सम्पूर्ण योगियों में से जो योगी श्रद्धा और भक्ति के साथ अन्तरात्मा से निरन्तर मुझे भजता है, उसे मैं सर्वश्रेष्ठ मानता हूँ।" मैं नहीं समझ सका कि 'श्रद्धा' और 'भक्ति' का क्या अर्थ है, इसलिए मैंने कहा, "कभी-कभी मैं अपने मस्तिष्क में कुछ प्रकाश पाता हूँ।" "वह मतिभ्रम है।" उन्होंने अकस्मात् ऐसा कहा। यद्यपि उन्होंने इसके लिए अपने पर कोई जोर नहीं डाला, तथापि यह बात उन्होंने इस गहराई से एकाएक कह दी कि उनके शब्द सुनकर मैं स्तब्ध रह गया। "राज का अर्थ है नरेश—नरेश योग" उन्होंने कहा, "किन्तु यह सम्राट योग है।"

मुझे मालूम था कि उन्होंने इतना ऊँचा स्थान किसी प्रयोगशाला के रासायनिकों के उपयोग से या किसी पाश्चात्य मीमांसात्मक प्रक्रिया से नहीं प्राप्त किया था। और मैं सचमुच यही चाहता था। "क्या आप व्याख्यान देते हैं ?" मैंने पूछा। उन्होंने कहा, "हाँ, यदि आप छह बजे सवेरे आयें तो मैं गीता पर व्याख्यान देता हूँ और उसका विग्रह के लिए कुछ फल या फूल ले आइये।" मैंने बगल के कमरे की ओर देखा! कमरा खाली था, उसका फर्श लकड़ी का था। दीवारें भी सपाट थीं। उसमें एक छोटा-सा मेज था और उस मेज पर एक चित्र था, जिसमें मानव की शक्ल की पाँच आकृतियाँ अंकित थीं, जिनकी बाहें सिर के ऊपर उठी थीं। पर इन आकृतियों की बाहें और चेहरे ऐसे नहीं थे, जिन्हें मैंने कभी किसी मानव में देखा हो। मुझे ज्ञात हुआ कि वह चित्र मेरी ओर देख रहा है।

जब मैं स्टोरफ्रंट के सामने सड़क पर निकला, तो वहाँ कुछ लोग खड़े थे और मैंने कहा—"मुझे नहीं लगता कि मैं एल.एस.डी. का सेवन आगे करूँगा। मैंने यह बात अपने से ही जोर से कही, लेकिन कुछ और लोगों ने भी इसे सुना।

स्टीव : आध्यात्मिक भारत के प्रति मैं अपना प्रशंसा-भाव दर्शाना चाहता था, इसलिए मैंने स्वामीजी से कहा कि मैं गांधी की आत्मकथा पढ़ चुका हूँ। "यह महिमा-मंडित कृति है," मैंने कहा। "इसमें महिमा-मंडित होने की क्या बात है ?" स्वामीजी ने चुनौती दी। जब उन्होंने यह प्रश्न किया, तो कमरे में और लोग भी उपस्थित थे। यद्यपि मैं एक अतिथि

था, लेकिन मेरी अज्ञानपूर्ण बात को चुनौती देने में स्वामीजी को हिचक नहीं हुई। मैंने गांधी की आत्मकथा से कुछ ऐसी बात ढूंढने की बहुत कोशिश की, जिससे मैं स्वामीजी के चुनौती-भरे प्रश्न "इसमें महिमामण्डित होने की क्या बात है?" का उत्तर दे सकूँ। मैंने कहना शुरू किया कि एक बार गांधीजी को, जब वे बच्चे थे, उनके कुछ मित्रों ने फुसलाकर मांस खिला दिया, यद्यपि उनका पालन शाकाहारी के रूप में हुआ था। उस रात गांधी को लगा कि उनके पेट में मेमना में-में कर रहा है। स्वामीजी ने मेरी बात को यह कहते हुए तुरन्त काट दिया कि, "भारत अधिकांश में एक शाकाहारी देश है। इसमें महिमामण्डित होने की कोई बात नहीं है।" मुझे उस वक्त किसी अन्य महिमाशाली बात की याद नहीं आई, जो मैं बता सकता। स्वामीजी ने कहा, "गांधी की आत्म-कथा का नाम है 'सत्य के प्रयोग' किन्तु सत्य की यह प्रकृति नहीं है। यह किसी के प्रयोग से नहीं पाया जा सकता। सत्य तो हमेशा सत्य है।"

यद्यपि यह मेरे अहं पर एक प्रहार था, लेकिन स्वामीजी द्वारा मेरी पोल खुलना और मेरा पराजित होना मेरे लिए एक उपलब्धि मालूम हुई। मैं उनके निर्णय के लिए उनके सामने कई विभिन्न मामले रखना चाहता था। मैं जानना चाहता था कि उनके बारे में वे क्या कहते हैं। मैंने उन्हें भगवद्गीता का पेपरबैक संस्करण दिखाया, जो मैंने अपनी पीछे वाली पाकेट में रखा था और जो मैं उन दिनों पढ़ रहा था। उन्होंने उसके पीछे के कवर को देखा। उस पर 'हिन्दुओं के शाश्वत धर्म' का उल्लेख था। स्वामीजी उस वाक्यांश को उधेड़ने लगे। उन्होंने बताया कि किस प्रकार हिन्दू शब्द मिथ्या नामकरण है और यह शब्द संस्कृत साहित्य में कहीं नहीं आता है। उन्होंने यह भी समझाया कि हिन्दुत्व और हिन्दू विश्वास शाश्वत नहीं हैं।

ब्रूस : धार्मिक जीवन बिताने की अपनी इच्छा के बारे में बताने के बाद मैं स्वामीजी को अंग्रेजी साहित्य के मेरे एक प्रोफेसर के साथ हुए अपने संघर्ष के बारे में बताने लगा। वे फ्रायडवादी थे, इसलिए उपन्यास इत्यादि पुस्तकों के सभी पात्रों की व्याख्या वे फ्रायड की भाषा में उन्हीं के अनुसार करते थे। उनके लिए हर चीज यौन-चेतना से जुड़ी थी; माँ बेटे के प्रति; यह उसके लिए; इत्यादि। किन्तु मेरे लिए यौन-चेतना का सार धार्मिक था। मैं उसे धार्मिक प्रेरणा या ईश्वर को समझने की इच्छा के सन्दर्भ में देखता था। मैं जो कुछ लिखता, इसी सन्दर्भ में लिखता, लेकिन वे हमेशा कहते, "धार्मिकता की व्याख्या भी फ्रायडवादी की तरह की जा सकती है।" इसलिए अपने विषय में मैं अच्छा परिणाम नहीं ला सका। मैंने स्वामीजी को यह बात बताई। वे बोले—"तुम्हारे प्रोफेसर ठीक कहते हैं।" मुझे यह सुनकर आश्चर्य हुआ। मैं एक भारतीय स्वामी से बात कर रहा हूँ और वे कह रहे हैं कि मेरे प्रोफेसर का कहना ठीक है कि हर वस्तु यौन-चेतना पर आधारित है, धर्म पर

नहीं। जब उन्होंने यह कहा तो जैसे मेरे पैर के नीचे से धरती खिसक गई हो। उसके बाद उन्होंने जो कुछ कहा था, उसकी व्याख्या की। वे कहने लगे कि भौतिक जगत में हर व्यक्ति हर कार्य यौन-चेतना या काम-वासना के आधार पर कर रहा है। हर व्यक्ति जो कुछ भी कर रहा है, वह यौन प्रेरणा से प्रेरित होकर कर रहा है। इसलिए फ्रायड ठीक कहता है, "हर चीज का आधार यौन-चेतना है।" उसके बाद उन्होंने स्पष्ट किया कि भौतिक जीवन क्या है और आध्यात्मिक जीवन क्या है। आध्यात्मिक जीवन में काम-वासना का नितान्त अभाव होता है। इस कथन का मेरे मन पर गहरा प्रभाव पड़ा।

वे मेरी भावुकतापूर्ण पुरानी धारणाओं की पुष्टि नहीं कर रहे थे, किन्तु वे मुझे नये विचार दे रहे थे। वे मुझे निर्देश दे रहे थे और मुझे उन्हें स्वीकार करना था। स्वामीजी से वार्तालाप करना बहुत अच्छा लगता था। मैंने उन्हें पूर्णतः स्वाभाविक पाया; मैंने उन्हें बहुत कलात्मक पाया। वे जिस तरह अपना सिर रखते थे, जिस तरह वे शब्दों का उच्चारण करते थे—वह बहुत ही गौरवपूर्ण था, बहुत ही सौजन्यपूर्ण था।

• • •

लड़कों ने स्वामीजी को केवल दार्शनिक ही नहीं, अपितु बहुत आत्मीय भी पाया।

स्टीव : *कुछ दिन बाद मैं स्वामीजी से मिलने गया और मैंने कहा कि मैं उनकी पुस्तक पढ़ रहा हूँ। एक चीज जिसने मेरा ध्यान विशेष रूप से आकर्षित किया था, वह थी, वह अंश जिसमें श्रीमद्भगवद्गीता के प्रणेता व्यासदेव स्वीकार करते हैं कि मैं निराशा का अनुभव कर रहा हूँ। तब उनके आध्यात्मिक गुरु नारद समझाते हैं कि उनके हृदय में निराशा के जन्म लेने का कारण यह है कि यद्यपि उन्होंने बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं, लेकिन उन्होंने ऐसे लेखन की उपेक्षा की है, जिसमें कृष्ण की महिमा का पूर्ण रूप से बखान किया गया हो। यह सुनकर व्यासदेव ने श्रीमद्भागवत की रचना की।*

जब मैंने यह पढ़ा, तो मैंने इस तथ्य से तादात्म्य किया कि व्यासदेव एक लेखक थे, क्योंकि मैं भी अपने आपको एक लेखक समझता था और मैं भी विषाद-ग्रस्त था। मैंने कहा, "लेखक व्यासदेव के सम्बन्ध में यह बात बड़ी मनोरंजक है। उन्होंने इतनी सारी पुस्तकें लिखी थीं, किन्तु फिर भी वे सन्तुष्ट नहीं थे, क्योंकि उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से कृष्ण का गुणगान नहीं किया था।" यद्यपि मुझे कृष्णभावनामृत की बहुत थोड़ी समझ थी, फिर भी स्वामीजी ने विस्फारित नेत्रों से मुझे देखा; उन्हें इस बात पर आश्चर्य था कि मैं श्रीमद्भागवत जैसे ऊँचे विषय पर बात कर रहा था। वे बहुत प्रसन्न प्रतीत हुए।

चक : *मैं तीसरे पहर पहुँचा था और स्वामीजी ने मुझे प्रसाद की एक प्लेट दी थी। मैं उसे खा रहा था कि एक मिर्च से मेरा मुँह जलने-सा लगा। स्वामीजी बोले—"क्या यह बहुत गरम है?" मैंने कहा, "हाँ," इसलिए वे एक चाय के छोटे प्याले में कुछ दूध लाए।*

उन्होंने मेरी प्लेट से थोड़ा चावल लिया और एक केले के साथ अपने हाथ से सब को मसल दिया। फिर बोले—"यह रहा। इसे खाओ। यह मिर्चों के प्रभाव को खत्म कर देगा।"

ब्रूस : उनके सम्बन्ध में कोई चीज दिखावटी नहीं थी, न वे अपना प्रभाव डालने के लिए कोई बनावटी तरकीब करते थे। वे जो थे, पूर्ण रूप से वही थे। स्वामीजी के कमरे में कोई फर्नीचर नहीं था, इसलिए हम फर्श पर बैठते थे। मुझे यह बहुत आकर्षक और सरल लगता। उनके सम्बन्ध में हर चीज प्रामाणिक थी। नगर के एक दूसरे भाग में एक अन्य स्वामी के यहाँ हम लोग गद्देदार बड़ी कुर्सियों पर बैठे थे और उनका कमरा खूब सजाया हुआ था। लेकिन नगर के इस भाग के वह स्वामी बहुत साधारण कपड़े पहने थे। उनके पास कामकाजी सूट नहीं था, जिसे वे केसरिया कपड़ों से ढक रहे थे। उस दूसरे स्वामी की तरह इनमें कोई बनावटीपन या दिखावा नहीं था। इसलिए मैंने पूछा कि क्या मैं उनका शिष्य बन सकता था और उन्होंने कहा—हाँ। मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई, क्योंकि वे दूसरे स्वामी से कितने भिन्न थे! उस अपटाउन स्वामी का शिष्य मैं इसलिए बनना चाहता था कि मैं उनसे कुछ प्राप्त करना चाहता था—कुछ ज्ञान पाना चाहता था। मेरा उद्देश्य स्वार्थपूर्ण था। किन्तु यहाँ, इस स्वामी के साथ मैं सचमुच भावात्मक सम्बन्ध अनुभव करने लगा था। मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि मैं स्वामीजी का शिष्य बनना चाहता हूँ। मैं सचमुच अपने आपको अर्पित कर देना चाहता था, क्योंकि मुझे लगा कि वे महान् हैं और वे मुझे जो कुछ दे रहे हैं, वह शुद्ध, पुरातन और अद्‌भुत है। भयानक नागरिक जीवन के लिए वह शान्तिदायक प्रलेप है। अपटाउन में मैं अपने आपको अजनबी पा रहा था।

एक अवसर पर हमारा वार्तालाप सन् १९६२ में मेरी पिछली भारत-यात्रा के विषय में होने लगा। मैं बताने लगा कि यह यात्रा मेरे लिए कितनी महत्त्वपूर्ण थी और इसने मुझे कितना प्रभावित किया था। मैंने यह भी उल्लेख किया कि वहाँ मेरी मित्रता एक लड़की से हो गई थी। इसलिए हमारी बात उसके बारे में होने लगी और मैंने बताया कि उसका एक चित्र भी मेरे पास है—उसका चित्र मेरे पर्स में मौजूद था। स्वामीजी ने उसे देखना चाहा। मैंने चित्र निकाला; स्वामीजी ने उस पर दृष्टि डालते हुए मुँह बनाया और कहा—ओह, यह सुन्दर नहीं है। भारत में लड़कियाँ इससे कहीं अधिक सुन्दर होती हैं।" स्वामीजी से यह सुनकर उस लड़की के प्रति मेरा लगाव खत्म हो गया। मुझे शर्म आई कि मैं एक ऐसी लड़की पर आसक्त था जिसे स्वामीजी सुन्दर नहीं मानते थे। मेरा ख्याल है कि मैंने उस चित्र पर फिर कभी दृष्टि नहीं डाली और उस लड़की के विषय निश्चय ही मैं फिर कभी नहीं सोचा।

• • •

ब्रूस एक नवागन्तुक था और स्टोरफ्रंट की बैठकों में केवल एक सप्ताह गया था, इसलिए किसी ने उसे यह नहीं बताया था कि डॉ. मिश्र के योग-केन्द्र, आनन्द-आश्रम के सदस्यों ने स्वामीजी और उनके अनुयायियों को एक दिन के लिए राज्य के उत्तरी हिस्से के एक ग्रामीण क्षेत्र में आमंत्रित किया था। एक दिन सवेरे ब्रूस स्टोरफ्रंट पर पहुँचा ही था कि किसी ने घोषणा की, "स्वामीजी जा रहे हैं।" और प्रभुपाद मकान से निकले और एक कार में बैठ गये। चिन्ताकुल होकर ब्रूस ने सोचा कि स्वामीजी उन्हें हमेशा के लिए छोड़कर भारत जा रहे हैं। होवर्ड ने बताया, "नहीं, हम ग्रामीण क्षेत्र में एक योग-आश्रम को जा रहे है।" किन्तु एक दूसरी कार पहले जा चुकी थी और स्वामीजी की कार में और अधिक जगह नहीं थी। ठीक उसी समय स्टीव आ गया। उसे आशा थी कि लड़के उसके मकान पर जाकर उसे गाड़ी में ले लेंगे। इस तरह स्टीव और ब्रूस दोनों नहीं जा सके।

ब्रूस ने ब्रांक्स में एक मित्र को फोन किया और उसे मना लिया कि वह ब्रूस और स्टीव को आनन्द आश्रम तक पहुंचा दे। लेकिन जब वे दोनों ब्रूस के मित्र के यहाँ पहुँचे, तो उनके मित्र ने निर्णय कर लिया कि उसे नहीं जाना है। अन्ततः उसने ब्रूस को अपनी कार उधार दी और स्वामीजी के दोनों नये अनुयायी आनन्द आश्रम के लिए रवाना हुए।

जब वे पहुँचे, तो प्रभुपाद अपनी मण्डली के साथ वृक्षों की छाया में एक पिकनिक मेज के इर्द-गिर्द बैठे प्रसाद ग्रहण कर रहे थे। आनन्द आश्रम एक सुन्दर स्थान था, वहाँ ढालू पहाड़ियाँ थीं, बहुत सारे वृक्ष थे, हरियाली थी, खुला आसमान था और एक झील थी। देर से पहुँचने वाले दोनों मित्र स्वामीजी के पास पहले गये, जो पिकनिक टेबल के सिरे पर परिवार के पिता की तरह बैठे थे। कीथ एक बड़े पात्र से हर एक की थाली में भोजन परोस रहा था। जब प्रभुपाद ने अपने दोनों भटके हुए शिष्यों को देखा, तो उन्होंने उन्हें अपने पास बैठा लिया और कीथ ने उन्हें भी परोस दिया। प्रभुपाद ने स्टीव की चपाती लेकर उस पर शक्कर का ढेर लगा दिया और स्टीव शक्कर के साथ रोटी चबाने लगा। यह देखकर सब हँसने लगे।

प्रभुपाद किसी तरह शेर पालने वाले के बारे में बात करने लगे। उन्होंने बताया कि एक बार एक मेले में उन्होंने एक व्यक्ति को एक शेर से लड़ते देखा था। वे दोनों एक दूसरे के ऊपर पहाड़ी से नीचे लुढ़क रहे थे। लड़के, जिन्होंने स्वामीजी को दर्शन के अतिरिक्त किसी अन्य विषय पर कभी बोलते नहीं देखा था, आश्चर्य में पड़ गये। वे बहुत प्रसन्न हुए—वे नगर के लड़के थे, जिन्हें उनके गुरुजी ग्रामीण क्षेत्र में ले गये थे और वहाँ उन्हें बड़ा आनन्द आ रहा था।

स्टीव : *मैं स्वामीजी के साथ एक लम्बी ढाल पर जा रहा था। मैं स्वामीजी को राधा और कृष्ण का एक चित्र दिखाकर उसके बारे में उनकी सहमति लेना चाहता था। यह चित्र*

मैंने नारद-भक्ति-सूत्र नाम की छोटी-सी पुस्तक में पाया था। मेरी योजना उसकी रंगीन प्रतिकृति तैयार कराके स्वामीजी के प्रत्येक अनुयायी को देने की थी। इसलिए जब हम घास पर चल रहे थे, तो मैंने वह चित्र उन्हें दिखाया और जानना चाहा कि क्या राधा और कृष्ण का वह चित्र ऐसा था कि उसकी प्रतिलिपियाँ तैयार कराई जायें। उन्होंने चित्र को देखा, मुसकराए, सिर हिलाया और कहा—हाँ।

ब्रूस : मैं स्वामीजी के साथ मैदान की चारों ओर घूम रहा था। अन्य सभी लोग कुछ अन्य कार्य कर रहे थे, स्वामीजी और मैं अकेले घूम रहे थे। वे वहाँ एक मन्दिर बनाने के बारे में बात कर रहे थे।

प्रभुपाद प्राकृतिक दृश्यों से भरे मैदान में घूम रहे थे; वे दूर के पहाड़ों और जंगलों को देख रहे थे और कीथ उनके साथ चल रहा था। प्रभुपाद ने बताया कि किस तरह डॉ. मिश्र ने आश्रम की झील के बीच का टापू उन्हें देना चाहा था ताकि उस पर वे एक मन्दिर बनाएँ। "आप किस तरह के मन्दिर के बारे में सोच रहे थे?" कीथ ने पूछा, "वह कितना बड़ा होगा?" प्रभुपाद मुसकराए और क्षितिज की ओर इशारा किया। "इतना बड़ा जितना कि सम्पूर्ण क्षितिज है?" कीथ हँसने लगा। "हाँ," प्रभुपाद ने उत्तर दिया।

आनन्द आश्रम के कुछ स्त्री-पुरुष वहाँ आ गये। एक स्त्री साड़ी पहने थी। प्रभुपाद दूसरी स्त्रियों की ओर मुड़े और उन्होंने कहा, "जो स्त्री साड़ी पहनती है, वह सचमुच स्त्रियोचित दिखाई देती है।"

• • •

तीसरे पहर काफी देर हो चुकी थी, जब स्वामीजी के कुछ अनुयायी झील के किनारे इकट्ठे हो गये और उन्मुक्त भाव से स्वामीजी के बारे में बात करने लगे। वे ईश्वर के साथ स्वामीजी के सम्बन्ध के विषय में अनुमान लगाने लगे। फिर वे स्वामीजी के साथ अपने सम्बन्ध के बारे में भी बात करने लगे।

वैली ने कहा, "हाँ, ठीक है, स्वामीजी भगवान् या उनका अवतार होने का दावा कभी नहीं करते; किन्तु उनका कहना है कि वे भगवान् के सेवक हैं और भगवान् के प्रेम की शिक्षा देते हैं।"

"किन्तु वे कहते हैं कि आध्यात्मिक गुरु भगवान् से भिन्न नहीं होता," होवर्ड बोला। वे सब शान्त दर्पण-जैसी झील के तट पर खड़े हो गये और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इस विषय में बात करना आवश्यक नहीं है। इसके उत्तर बाद में प्रकट होंगे। उनमें से किसी के पास सचमुच कोई आध्यात्मिक ज्ञान नहीं था, लेकिन वे अपनी श्रद्धा को गहरा करना चाहते थे।

बाद में कीथ, वैली और होवर्ड घूमते हुए ध्यान-कक्ष में गये। वहाँ एक सीट पर डॉ. मिश्र का एक चित्र रखा था। वे योरप गये हुए थे। सब से अद्‌भुत बात यह थी कि वहाँ टिमटिमाते लट्टू की तरह का प्रकाश हो रहा था। वैली बोला—"मुझे लगता है जैसे मैं सेंट मार्क्स प्लेस में किसी बड़ी दुकान में हूँ। यह किस प्रकार का आध्यात्मिक ध्यान है?" होवर्ड ने पूछा। डॉ. मिश्र के एक अनुयायी ने, जो सफेद कुर्ता और सफेद बेलबोटम पैंट में था, बताया कि उसके गुरु ने कहा है कि बैठकर इस प्रकाश पर ध्यान लगा सकते हैं। कीथ बोला, "हमारे स्वामीजी कहते हैं कि हमें कृष्ण पर ध्यान लगाना चाहिए।"

• • •

सूर्यास्त के बाद लोग मुख्य भवन के बड़े कमरे में *स्लाइड* चित्र देखने के लिए एकत्रित हुए। इसमें अधिकतर भारत और आनन्द आश्रम पर लिए गये कई प्रकार के चित्रों का संकलन था। एक लोकप्रिय भारतीय सितार-वादक का रेकॉर्ड नेपथ्य में बज रहा था। कुछ चित्र-पट्टियाँ विष्णु-मन्दिरों की थीं और जब एक पट्टी तेजी से गुजर गई तो प्रभुपाद ने कहा—मुझे इसे देखने दीजिए, क्या आप मन्दिरों वाली उस पट्टी को फिर से दिखा सकते हैं?" इस तरह कई बार हुआ, जब जब स्वामीजी ने भारत के प्रसिद्ध मन्दिरों को पहचान लिया। बाद में एक लड़की की कई पट्टियाँ दिखाई गईं जो डॉ. मिश्र के आश्रम की सदस्या थी। वह भारतीय नृत्यों की भंगिमाएँ दिखा रही थी। जब उसका एक चित्र आगे निकल गया तो आश्रम का एक व्यक्ति हास्य विनोद में बोला—"पीछे लौटो, मुझे वह मन्दिर फिर से दिखाओ।" यह मजाक उसने स्वामीजी को लक्ष्य करके किया लगता था और बहुत भोंडा था। उनके अनुयायी इस पर हँसे नहीं।

उसके बाद स्वामीजी का व्याख्यान हुआ। वे बिल्डिंग के सबसे बड़े कक्ष में पालथी मारकर सोफा पर बैठ गये। कक्ष लोगों से भरा था; उसमें लोअर ईस्ट साइड से स्वामीजी के अनुयायी थे और आनन्द-आश्रम के योगी थे। वे या तो फर्श पर बैठे थे या दीवारों के सहारे खड़े थे; कुछ दरवाजे पर भी खड़े थे। स्वामीजी ने जनतंत्र की आलोचना से अपना व्याख्यान आरम्भ किया। उन्होंने कहा कि लोग इन्द्रिय-सुख के पीछे पागल हैं, इसलिए वे ऐसे नेता के पक्ष में मत देते हैं, जो उनकी वासना और लोभ-वृत्ति को सन्तुष्ट कर सके—नेता चुनने की जनता की एकमात्र यही कसौटी रह गई है। पैतालीस मिनट तक स्वामीजी कृष्णभावनामृत के महत्त्व की व्याख्या करते रहे—उनका रेकर्डर चुपचाप एक के बाद दूसरी रील भरता रहा।

तब उन्होंने एक संकीर्तन का नेतृत्व किया, जिसने सभी भेदों को मिटा दिया और उस रात वहाँ एकत्र हुए प्रत्येक व्यक्ति का सर्वोत्तम रूप प्रकाश में आया। इससे कई रातें पहले

प्रभुपाद ने सेकंड एवन्यू के अपने कक्ष में अपने अनुयायियों को सिखाया था कि नृत्य कैसे किया जाता है। जब उन्होंने सरल पद संचालन का प्रदर्शन किया था, तो उनके अनुयायी एक पंक्ति के उनके पीछे खड़े हो गये। अपनी बाहों को सिर के ऊपर किये हुए वे पहले अपना बायां पैर दाहिने पैर के आगे लहराते हुए ले जाते थे, फिर उसी लहराते ढंग से उसे पीछे लाते थे। तब इसी भाँति वे दाहिना पैर बाएं पैर के आगे ले जाकर उसे पीछे लाते थे। अपनी बाहें ऊपर उठाए हुए प्रभुपाद आगे बढ़ते जाते थे। उनका शरीर एक ओर से दूसरी ओर झूमता जाता था। बायां पैर दाहिनी ओर और दाहिना पैर बाईं ओर—तीन ताल की गति का अनुसरण करता हुआ—गतिमान रहता। उन्होंने शिष्यों को नियमित काल गति और मंद अर्द्धकाल लय का अभ्यास करा दिया था। कीथ ने इसे "स्वामी स्टेप" का नाम दिया था, मानो यह नया बालरूम डांस हो।

प्रभुपाद के अनुयायी नृत्य करने लगे और शीघ्र अन्य लोग भी उनके साथ हो गये। भावावेश की दशा में वे लय-गति के साथ वृत्ताकार होकर कमरे में चारों ओर घूमने लगे। कभी वे नृत्य करते, कभी झूमते, कभी कूदते और कभी चक्कर लगाते। इस तरह संकीर्तन एक घंटे पर्यन्त प्रसन्नतापूर्वक चलता रहा; स्वामीजी सबको अधिक से अधिक प्रोत्साहन देते रहे। आश्रम में एक नवागन्तुक के पास एक वाद्ययंत्र था। स्वामीजी के संगीत के साथ वह भी अपने यंत्र से अपने ढंग का झूमता राग निकालने लगा। एक अन्य व्यक्ति तबला बजाने लगा।

आनन्द आश्रम के सदस्य कुछ दिनों से दो प्रतिद्वन्द्वी गुटों में बंट गये थे। एक गुट तो अवस्था-प्राप्त लोगों का था—उन वृद्ध महिलाओं की तरह जो स्वामीजी के अपटाउन व्याख्यानों में शामिल हुई थीं। दूसरा गुट युवाओं का था, जिनमें अधिकतर हिप्पी-दम्पति थे। किन्तु कीर्तन में उनके मतभेद विस्मृत हो जाते थे और जैसा कि, बाद में उन्हें पता चला, वे समाप्त भी हो गये। चाहे उन्हें पसन्द आया हो या नहीं, लेकिन वहाँ जो भी उपस्थित थे, उन सब को खड़े होकर नृत्य में प्रवृत्त होना पड़ा।

उसके बाद बहुत देर हो गई। स्वामीजी ने अतिथि-कक्ष में विश्राम किया और उनके लड़के अपने सोने के बैगों में बाहर सोए।

• • •

होवर्ड : *मैं तीन या चार बार जगा और हर बार पीठ के बल लेटकर मैंने तारों का अवलोकन किया, जो हमेशा विभिन्न स्थितियों में होते थे। मुझे समय का पता नहीं लग पाया। तारों के स्थान-परिवर्तन ने मुझे चक्कर में डाल दिया। तब सवेरा होने के ठीक पहले मैं स्वप्न देखने लगा। मैंने स्वप्न देखा कि भक्तों का समूह एक सुन्दर स्वर्णिम युवक*

के चारों ओर जमा है। उसे देखना मात्र विमुग्ध हो जाना था। उसका दिव्य शरीर ऐसी निरुपाधि सुन्दरता विकीर्ण कर रहा था जैसी इस संसार में कभी नहीं देखी गई हो। स्तब्ध होकर मैं ने पूछा, "यह कौन है?" किसी ने कहा, "क्या तुम नहीं जानते? वे स्वामीजी हैं।" मैं ध्यानपूर्वक देखता रहा, लेकिन कोई समानता नहीं पा सका। वह युवक लगभग १८ वर्ष का लगता था, सीधे वैकुण्ठ से आया हुआ। "यदि वे स्वामीजी हैं," मैं आश्चर्य में अपने से कहने लगा, "तो उसी रूप में वे पृथ्वी पर क्यों नहीं आते?" मेरे अन्दर से कहीं से यह आवाज आई, "लोग मेरा अनुसरण मेरी सुन्दरता के लिए करेंगे, मेरी शिक्षाओं के लिए नहीं।" अचम्भित होकर मैं जग गया। स्वप्न मेरे मन में स्पष्ट था, स्वप्न की अपेक्षा यह दिव्य दर्शन था। मुझ में विचित्र प्रकार की ताजगी आ गई हैं, जैसे कोई अज्ञात लेप शरीर पर लगा दिया गया हो। मैंने फिर देखा कि तारा-मण्डल अपना स्थान बदल चुका है और मंद प्रकाश वाले तारे आने वाले भोर में विलीन हो गये। मुझे स्मरण है कि स्वामीजी ने मुझे बताया था कि अधिकतर स्वप्न केवल मस्तिष्क के कार्य हैं, लेकिन आध्यात्मिक गुरु के सम्बन्ध में देखे गये स्वप्नों का आध्यात्मिक महत्त्व होता है।

कीथ को भी उस रात एक स्वप्न आया था।

कीथ : मैंने कृष्ण और अर्जुन को कुरुक्षेत्र के मैदान में देखा। अर्जुन कृष्ण से जिज्ञासा कर रहे थे और कृष्ण उन्हें भगवद्गीता सुना रहे थे। तब वह चित्र गायब हो गया और उसमें के आकार बदल गये। उनके स्थान पर स्वामीजी थे और मैं उनके समक्ष घुटने टेककर झुका हुआ था और वही वार्तालाप चल रहा था। मेरी समझ में आया कि अब वही समय फिर आ गया है और स्वामीजी वही दे रहे हैं, जो कृष्ण ने दिया था और हम सब अर्जुन की स्थिति में हैं। स्वप्न से स्पष्ट हो गया कि स्वामीजी से शिक्षा ग्रहण करना वैसा ही है जैसा कृष्ण से उपदेश सुनना।

• • •

पहाड़ों के ऊपर सूर्योदय हुआ। झील के ऊपर का आकाश अनेक रंगों में चमक उठा। वैली और कीथ मैदान में घूमते हुए प्रभुपाद से कह रहे थे कि यह सब कितना सुन्दर है। "हम लोगों का उतना सम्बन्ध इस सुन्दर दृश्यावली से नहीं है, जितना उस सुन्दर व्यक्ति है, जिसने यह दृश्यावली बनाई है।"—प्रभुपाद ने कहा।

• • •

बाद में... प्रभुपाद ब्रूस के साथ वोक्सवेगन में बैठकर नगर वापस आ रहे थे। रिबन की तरह काली पहाड़ी सड़क पर कार चक्कर काटती हुई आगे बढ़ी। दोनों ओर घने हरे

जंगल थे; बीच बीच में पहाड़ी दृश्य और ऊपर विस्तृत आकाश था। ब्रूस के लिए प्रभुपाद को गाड़ी में ले जाना एक बहुत ही विरल अवसर था, क्योंकि स्वामीजी के लड़कों में से किसी के पास कार नहीं थी। वे हमेशा बस या रेल से चलते थे। स्वामीजी के लिए कार में यात्रा करना उचित ही था, किन्तु यह केवल एक छोटी वोक्सवेगन थी और जब कभी वह किसी बम्प से टकराती और स्वामीजी को झटका देती, तो ब्रूस कनखियों से उनकी ओर देखता था। जब वे पहाड़ी रास्ते का चक्कर लगाते हुए आगे बढ़ रहे थे, तो ब्रूस को याद आया कि उसने एल्डस हक्सले की पत्नी की एक पुस्तक में ध्यान के लिए सर्वोत्तम स्थानों के विषय में कहीं पढ़ा था। एक मत यह था कि कोई बड़ा जलाशय ध्यान के लिए सर्वोत्तम स्थान होता है, क्योंकि वहाँ वायु में निषेधात्मक आयन रहते हैं और दूसरा मत यह था कि पहाड़ों में ध्यान करना ज्यादा अच्छा होता है, क्योंकि आप अपेक्षया ऊँचाई पर और ईश्वर के अधिक निकट होते हैं। "क्या आध्यात्मिक अनुभूति के लिए पहाड़ों में ध्यान लगाना ज्यादा अच्छा है?" ब्रूस ने पूछा। प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "यह सब बकवास है। 'ज्यादा अच्छे स्थान' का प्रश्न नहीं है। क्या तुम सोचते हो कि ईश्वर ऊँचाई पर किसी ग्रह जैसे स्थान में है और तुम्हें उसे पाने के लिए ऊँचाई पर जाना होगा। नहीं, तुम कहीं भी ध्यान लगा सकते हो। केवल हरे कृष्ण का जप करो।"

कुछ समय के बाद स्वामीजी के लिए यात्रा थकान पैदा करने लगी और आगे सिर झुकाकर वे झपकी लेने लगे।

• • •

ब्रूस स्वामीजी के साथ उनके कक्ष तक गया; उसने दरवाजा खोलकर, खिड़की को उनकी पसन्द के अनुसार सेट किया और कमरे की हर चीज को इस प्रकार व्यवस्थित किया, मानो वह स्वामीजी का व्यक्तिगत सेवक हो। प्रभुपाद सेकंड एवन्यू के अपने आवास में फिर से सुव्यवस्थित हो गये; आनन्द आश्रम की यात्रा से वे प्रसन्न थे। संकीर्तन सफल रहा था और डॉ. मिश्र के एक प्रमुख शिष्य ने टिप्पणी की थी कि वह प्रभुपाद के अनुयायियों से प्रभावित था : केवल जप से वे यौगिक अनुशासन का उच्च स्तर प्राप्त करते प्रतीत होते थे, जब कि "हम लोगों को अपने सारे आसनों और प्राणायाम से कठिनाई हो रही है।"

• • •

कुछ समय से संयुक्त राज्य का वियतनाम में बढ़ा हुआ उलझाव वियतनाम-युद्ध के प्रति विरोध को बढ़ावा दे रहा था। २९ जुलाई को अमरीकी वायुयानों ने उत्तरी वियतनाम

के दो बड़े नगरों—हनोई और हाइफांग—की आबादी पर बम बरसाए थे। अमरीकी उलझाव की इस बढ़ोतरी पर कई मित्र देशों ने, जिन में कनाडा, जापान और फ्रांस शामिल थे, खेद प्रकट किया। संयुक्त राष्ट्र के महासचिव ऊ थां ने अमेरिका की वियतनाम-नीति की खुलकर आलोचना की। युद्ध का विरोध संयुक्त राज्य के सिनेट से लेकर नव-निर्मित शान्ति-समूहों तक फैल गया और विरोधियों द्वारा युद्ध और अनिवार्य सैनिक सेवा के विरोध में शान्ति-यात्राएँ निकाली गईं, धरने दिए गये और रैलियाँ आयोजित की गईं।

धार्मिक विरोध की अगुवाई छठे पोप पाल ने की। विश्व-चर्च-परिषद ने वियतनाम में अमेरिका के सम्मिलित होने की निंदा की और विचार-विमर्श की दिशा में "सर्वाधिक प्रभावशाली कदम" के रूप में युद्ध बन्द करने की मांग की। ६ अगस्त को (हिरोशिमा पर बम गिराए जाने के वार्षिक दिन) अमेरिका के कई बड़े शहरों में प्रदर्शन हुए, जिनमें संयुक्त राष्ट्र के मुख्यालय न्यूयार्क में शंति-जागरण का कार्यक्रम सम्मिलित था।

३१ अगस्त को संयुक्त राष्ट्र की जनरल असेम्बली की इमारत के सामने दो सप्ताह लम्बा शान्ति जागरण शुरू होने वाला था और श्रीमान् लारी बोगर्ट ने प्रभुपाद और उनके अनुयायियों को आमंत्रित किया था कि वे "शान्ति के लिए प्रार्थना" के जागरण का उद्घाटन करें। लारी बोगर्ट, जो संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में कार्य करते थे, स्वामीजी के मित्र बन गये थे और इस्कान की लेखन-सामग्री के मुद्रण-कार्य में उनकी सहायता के लिए आये थे। इस्कान के लेटर हेड की डिजाइन जेम्स ग्रीन ने बनाई थी, उसमें राधा-कृष्ण का चित्र अंकित था और इस्कान के ट्रस्टियों की सूची के अन्त में बोगर्ट का नाम भी मुद्रित था।

प्रभुपाद ने शान्ति जागरण के लिए श्रीमान् बोगर्ट का आमंत्रण स्वीकार कर लिया। प्रभुपाद को सार्वजनिक रूप में हरे कृष्ण का कीर्तन विज्ञापित करने का इसमें अच्छा अवसर दिखाई दिया, इसलिए आयोजन में सम्मिलित होने में उन्हें प्रसन्नता थी। उन्होंने अपने श्रोताओं को सूचित किया कि ३१ अगस्त, सोमवार को, ६-३० सवेरे की कक्षा की बजाये लोगों को विशेष कीर्तन के लिए संयुक्त राष्ट्र के मुख्यालय पर एकत्र होना चाहिए।

• • •

अगस्त ३१

कुछ लोग स्टोरफ्रंट पर मिले और वहाँ से करताल, तंबूरा और स्वामीजी का बोंगो लेकर बस से गये। स्वामीजी अपने कुछ अनुयायियों के साथ टैक्सी से गये। अनुयायियों का ड्रेस अपने ढंग का निराला था—घिसे-पिटे जूते, काली पतलून या नीली जीन्स, टी-शर्ट्स या नीचे तक बटन वाली स्पोर्ट शर्ट्स। सवेरे-सवेरे अपटाउनकी यात्रा से लड़कों में उत्साह भर गया और जब उन्होंने संयुक्त राष्ट्र के मुख्यालय में स्वामीजी को लहराते हुए

केसरिया चोले में देखा तो वे भावाविष्ट हो उठे। स्वामीजी ने कीर्तन आरम्भ किया, किन्तु शान्ति जागरण के आयोजकों ने तत्काल हस्तक्षेप किया और उनसे रुक जाने को कहा। उन्होंने कहा कि यह "मौन जागरण" था और इसमें प्रार्थनापूर्ण अहिंसक मौन होना चाहिए। लड़कों को चुप करा दिया गया, किन्तु स्वामीजी ने बन्धन को स्वीकार कर लिया और वे अपनी माला पर मौन भाव से जप करने लगे।

एक अधिकारी एकत्रित जनसमूह के सम्मुख खड़ा हुआ और एक छोटा-सा भाषण दिया, जिसमें उसने गांधीजी का उल्लेख किया और तब प्रभुपाद की ओर मुड़ते हुए उसने बताया कि अब वे शान्ति के बारे में बोल सकते थे। स्वामीजी सीधे खड़े हो गये, संयुक्त राष्ट्र की गगनचुम्बी इमारत उनके पीछे खड़ी थी। स्वामीजी मंद कोमल स्वर में बोलने लगे। उन्होंने कहा कि संसार को यह स्वीकार करना होगा कि भगवान् हर वस्तु के स्वामी और सब के मित्र हैं। तभी हम वास्तविक शान्ति प्राप्त कर सकते हैं। श्रीमान् बोगर्ट ने स्वामीजी की मौन प्रार्थना के लिए दो घंटे का समय रखा था। प्रभुपाद ने अपने भक्तों को एक साथ बैठा दिया और उनसे मौन जप करने को कहा। जब दो घंटे का निर्धारित समय हो गया तब वे चले गये।

जब प्रभुपाद सवेरे की बेला में डाउनटाउनकी भारी भीड़ में से होकर निकल रहे थे, तो उन्होंने कहा कि उन्हें कलकत्ता का स्मरण हो आया है। 'रुको और चलो' यातायात और भीड़ के भारी शोर-गुल के बीच उन्होंने बताया, "हमें शान्ति जागरण से कुछ लेना-देना नहीं है। हमें तो हरे कृष्ण के मंत्र का प्रचार करना है। बस। यदि लोग इस मंत्र को स्वीकार कर लेते हैं, तो शान्ति अपने आप आ जायेगी। तब लोगों को शान्ति के लिए कृत्रिम रूप में प्रयत्न नहीं करना होगा।

• • •

सितम्बर १

न्यूयार्क पोस्ट ने संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में स्वामीजी की मण्डली का एक चित्र प्रकाशित किया। स्टीव उसकी कटिंग प्रभुपाद के पास लाया। "स्वामीजी देखिए, उन्होंने आपका उल्लेख 'सामी कृष्ण' के रूप में किया है।

प्रभुपाद : "सामी कृष्ण ? वह बिल्कुल ठीक है।"

चित्र में कुछ लड़के अपने सिर अपनी बाहों पर रखे बैठे थे। "तुम कहाँ हो ?" प्रभुपाद ने पूछा। स्टीव ने इशारा किया। "ओह! तुम इस तरह सिर नीचा करके कीर्तन करते हो ?"

• • •

प्रभुपाद ने अपने परिचित श्रीमान् बोगर्ट को अनुगृहीत करने के लिए शान्ति जागरण में भाग लिया था। अब श्रीमान् बोगर्ट ने स्वामीजी के सहयोग की प्रशंसा करने और स्टोरफ्रंट जाने के लिए अपनी सहमति जताने के लिए उन्हें फोन किया। वे स्वामीजी की सहायता करना चाहते थे। स्टोरफ्रंट आने पर वे स्वामीजी से विचार-विमर्श करना चाहते थे कि स्वामीजी संयुक्त राष्ट्र के साथ किस तरह कार्य कर सकते थे और भारतीय संस्कृति और शान्ति के आन्दोलन में वे कुछ बड़े लोगों की सहायता किस तरह प्राप्त कर सकते थे।

प्रभुपाद ने श्रीमान् बोगर्ट के तात्कालिक आगमन को बहुत महत्त्वपूर्ण माना। वे उनके लिए स्वयं भोजन बनाना और अपने आवास में अत्यधिक आतिथ्यपूर्ण ढंग से उनका स्वागत करना चाहते थे। जब वह दिन आ गया, तो प्रभुपाद और कीथ ने छोटे-से रसोईघर में जुटकर कई घंटों में सर्वोत्तम भारतीय व्यंजन तैयार किये। प्रभुपाद ने स्टेनली को नीचे नियुक्त कर दिया और उससे बोले कि जब तक वे श्रीमान् बोगर्ट के लिए भोजन तैयार करने में व्यस्त थे किसी को ऊपर न आने दिया जाये। दूर तक देखने वाली साधुओं की शैली में आँखें झपकाते हुए स्टेनली राजी हो गया।

वह स्टोरफ्रंट में नीचे जमकर बैठ गया। वहाँ कुछ लड़के प्रकट हुए तो वह बोला—"स्वामीजी से मिलने तुम ऊपर नहीं जा सकते। कोई भी नहीं जा सकता।" दोपहर १२ बजे के करीब श्रीमान् बोगर्ट आये—पीत वर्ण के, वृद्ध और लोअर ईस्ट साइड के दृष्टिकोण से बहुत अच्छे कपड़े पहने हुए। उन्होंने कहा कि वे स्वामी भक्तिवेदान्त से मिलना चाहते थे। स्वामीजी के आदेश की सारी गम्भीरता को अपने बचकाने चेहरे पर लाकर आगन्तुक को प्रभावित करने की कोशिश करते हुए स्टेनली बोला, "खेद है। स्वामीजी इस समय व्यस्त हैं और उन्होंने कहा है कि वे किसी से नहीं मिल सकते।" श्रीमान् बोगर्ट ने प्रतीक्षा करने का निर्णय लिया। स्टोरफ्रंट में कोई कुर्सी नहीं थी, स्टेनली कहीं से एक फोल्डिंग कुर्सी ले आया। गरमी बहुत थी। श्रीमान् बोगर्ट ने कई बार अपनी घड़ी की ओर देखा। आधा घंटा बीत गया था। स्टेनली जप करता बैठा रहा, कभी कभी वह आँखे झपका लेता। एक घंटे बाद श्रीमान् बोगर्ट ने पूछा कि क्या वे अब स्वामीजी से मिल सकते हैं? स्टेनली ने फिर भी इनकार किया। श्रीमान् बोगर्ट गुस्से में चले गये।

ऊपर स्वामीजी चिन्ता में थे कि श्रीमान् बोगर्ट क्यों नहीं आये। अन्त में उन्होंने कीथ को नीचे भेजा और स्टेनली ने उसे बताया कि कैसे उसने एक व्यक्ति को भगा दिया था। "क्या?" कीथ गरज उठा, "किन्तु वह व्यक्ति तो..."

कुछ क्षणों में जो कुछ हुआ था, स्वामीजी को मालूम हो गया। वे आग-बबूला हो गये। वे नीचे स्टोरफ्रंट में आये। "मूर्ख! महामूर्ख!" वे लौट पड़े और गुस्से में कमरे में

बैठे हर एक को गहरी डाँट दी, किन्तु सबसे अधिक डाँट स्टेनली को मिली। स्वामीजी को इतने गुस्से में किसी ने कभी नहीं देखा था। हताश होकर वे अपने कमरे में लौट गये।

कुछ समय से स्टेनली कभी कभी खोया-सा हो जाया करता था और अब उसका व्यवहार और भी दुर्बोध होने लगा था। स्टेनली की माँ जानती थी कि उसका लड़का सालों से मानसिक कष्ट में था और इसलिए उसने प्रभुपाद से उस पर गहरी निगाह रखने की प्रार्थना की थी। किन्तु अब स्टेनली अपने दायित्व के प्रति और भी ढीला हो गया और रसोई-घर और स्टोरफ्रंट की सफाई भी उसने बन्द कर दी। वह अकेला खड़ा-खड़ा किसी चीज पर नजर गड़ाए रहता। वह बहुत उदास था और कभी कभी आत्महत्या की बात करता। उसने नियमित रूप से जप करना भी बन्द कर दिया। लड़के नहीं समझ पा रहे थे कि क्या करना चाहिए; उनको विचार आया कि शायद उसे उसकी माँ के पास भेज देना ठीक रहेगा।

एक दिन स्टेनली स्वामीजी से मिलने ऊपर गया। उनके निकट पहुँचकर वह बैठ गया।

प्रभुपाद : "हाँ, क्या है ?"

स्टेनली : "क्या मुझे पचास डालर मिल सकते हैं ?"

प्रभुपाद : "क्यों ?"

प्रभुपाद सब पैसे अपने पास रखते थे; इसलिए जब उनके लड़कों को किसी चीज की जरूरत होती, चाहे वह बस के किराए के लिए पचीस सेंट ही हों, तो उन्हें स्वामीजी से मिलना पड़ता था। स्वामीजी को अपव्यय कभी भी मंजूर नहीं था। वे इतने मितव्ययी थे कि जब उन्हें कोई लिफाफा मिलता तो उसे सावधानी से फाड़ते और दूसरी साइड को लिखने के कागज के रूप में काम में लाते। इसलिए वे जानना चाहते थे कि स्टेनली पचास डालर क्यों चाहता था। स्टेनली धीरे से बोला—"मैं कुछ पेट्रोल खरीदकर आत्मदाह करना चाहता हूँ।" प्रभुपाद ने दरवाजे पर चक को देखा और उससे कहा कि ब्रूस को तुरन्त बुलाकर लाए। ब्रूस तुरन्त आ गया और प्रभुपाद और स्टेनली के पास बैठ गया। प्रभुपाद ने ब्रूस को जिसे हाल में ही उन्होंने छोटी मोटी धन राशि की व्यवस्था का भार सौंपा था— कहा कि स्टेनली को वह पचास डालर दे दे और उन्होंने स्टेनली से दुबारा कहलाया कि वह पचास डालर क्यों चाहता था।

ब्रूस ने प्रतिवाद किया, "किन्तु स्वामीजी, हमारे पास इतना धन नहीं है।"

प्रभुपाद शान्त स्वर में बोले—"स्टेनली, तुमने देखा, ब्रूस कहता है कि हमारे पास उतना धन नहीं है।"

तब उन्होंने स्टेनली की माँ को फोन किया। बाद में प्रभुपाद ने बताया कि वे जान गये

थे कि स्टेनली पागल हो गया है, क्योंकि उसने पेट्रोल के लिए पचास डालर माँगे थे जबकि वह केवल पैंतीस सेंट में आती थी।

• • •

कीथ सदा की भाँति रसोई में भोजन तैयार कर रहा था, लेकिन आज स्वामीजी रसोई-घर में चूल्हे के पास खड़े अपने शिष्य को देख रहे थे। कीथ रुका और भोजन बनाते-बनाते उसने ऊपर देखा और कहा "स्वामीजी, क्या मैं आपका शिष्य बन सकता हूँ?"

प्रभुपाद ने उत्तर दिया, "हाँ, क्यों नहीं? तुम्हारा नाम कृष्णदास होगा।"

इस सीधे-सादे विचार-विनिमय से पहली बार शिष्यत्व के लिए याचना की गई थी और प्रभुपाद द्वारा पहली बार दीक्षा-दान किया गया। लेकिन इसमें इससे बढ़कर कुछ और था। प्रभुपाद ने घोषणा की कि वे शीघ्र ही दीक्षा-दान का आयोजन करेंगे। एक लड़के ने पूछा, "दीक्षा-दान क्या है, स्वामीजी?" प्रभुपाद ने उत्तर दिया—"मैं तुम्हें बाद में बताऊँगा।"

पहले उनके पास माला होनी चाहिए। कीथ टैंडी की लेदर कम्पनी गया और वहाँ से आधे इंच के काठ के मनके और उन्हें गूँथने के लिए धागा ले आया। स्वामीजी ने कहा मनकों को गिनते हुए जप करना श्रेयस्कर है—ठीक-ठीक १०८ मनकों की माला होनी चाहिए। इसमें स्पर्श की अनुभूति होती है। भारत के वैष्णवों की भाँति मनकों को गिनते रहने से पता चलता है कि मंत्र का जप कितनी बार किया गया। भारत के कुछ भक्तों के पास एक हजार से अधिक मनकों की माला होती है, उन्होंने बताया। वे उससे बार-बार जप करते हैं। प्रभुपाद ने लड़कों को यह भी बताया कि १०८ मनकों वाली इस माला में दो मनकों के बीच दुहरी गांठ किस तरह लगाई जाती है। १०८ की संख्या का विशेष महत्त्व है : उपनिषदों की संख्या १०८ है, भगवान् कृष्ण की प्रमुख गोपियाँ भी १०८ हैं।

उन्होंने कहा कि नवदीक्षितों को प्रतिज्ञाएँ लेनी होंगी और एक प्रतिज्ञा होगी प्रतिदिन निर्धारित संख्या में मनकों की माला द्वारा जप करना। स्वामीजी के इन बालकों में से लगभग एक दर्जन दीक्षा के लिए चुने जाने योग्य थे। किन्तु चुने जाने का कोई कड़ा नियम नहीं था। यदि वे चाहें तो वे दीक्षा ले सकते थे।

स्टीव : *यद्यपि मैं वह सब कुछ पहले से करता आ रहा था, जो स्वामीजी द्वारा निर्धारित था, लेकिन मुझे लगा कि दीक्षा का अर्थ भारी प्रतिबद्धता थी। और जब मैंने पूर्ण स्वतंत्र बने रहने के अपने अन्तिम प्रबल आवेगों को परखा, तो दीक्षा ग्रहण करने में मुझे हिचकिचाहट हुई।*

प्रभुपाद के मित्र दीक्षा को अपने अपने ढंग से देखते थे। कुछ इसे बहुत गम्भीर जिम्मेदारी समझते थे और कुछ ने इसे केवल भोज-उत्सव या एक घटना-मात्र के रूप में लिया। समारोह के कुछ दिन पूर्व आंगन में बैठे माला गूँथते हुए वैली और होवर्ड इसके विषय में इस प्रकार बातें कर रहे थे।

वैली : *यह एक औपचारिकता मात्र है। इसमें स्वामीजी को अपना आध्यात्मिक गुरु स्वीकार करना होता है।*

होवर्ड : *इसमें करना क्या होता है?*

वैली : *किसी को बिल्कुल ठीक से ज्ञात नहीं। भारत में यह सर्वमान्य प्रथा है। क्या तुम ऐसा नहीं सोचते कि स्वामीजी को आध्यात्मिक गुरु के रूप में स्वीकार करना है?*

होवर्ड : *मैं नहीं जानता। जो कुछ भी हो, वे अच्छे आध्यात्मिक गुरु मालूम होते हैं। मेरा तात्पर्य है, मैं उन्हें और उनकी शिक्षा को बहुत पसन्द करता हूँ। इसलिए मेरा अनुमान है कि एक तरह से वे पहले से ही मेरे आध्यात्मिक गुरु हैं। मैं नहीं जानता कि दीक्षा से स्थिति में क्या अन्तर आ जायेगा।*

वैली : *मैं भी नहीं जानता। मैं समझता हूँ, इससे कोई अन्तर नहीं आता। यह केवल एक औपचारिकता है।*

• • •

सितम्बर ८

जन्माष्टमी का दिन, भगवान् कृष्ण के आविर्भाव का दिन। एक वर्ष पूर्व प्रभुपाद ने कृष्ण का जन्मदिन *जलदूत* जहाज में कोलम्बो से कुछ दूर बाहर मनाया था। अब ठीक एक वर्ष बाद उनके पास हरे कृष्ण कीर्तन करने वालों की एक टोली थी। वे उन सबको एकत्र करेंगे और उनसे कीर्तन, शास्त्रों का अध्ययन, व्रत तथा भोज का समारोह कराएँगे—अगले दिन दीक्षा होगी।

६ बजे प्रभुपाद नीचे आये और वे हमेशा की भाँति प्रातःकालीन कक्षा लेने जा रहे थे कि लड़कों में से एक ने पूछा कि क्या आज आप अपनी पाण्डुलिपि में से पढ़ेंगे। प्रभुपाद शरमा गये, किन्तु *भगवद्गीता* की अपनी टीका में से पढ़ने के लिए कहे जाने से उन्हें जो हर्ष हुआ, उसे वे छिपा नहीं पाए। सामान्यतया वे *गीता* के डॉ. राधाकृष्णन के आक्सफोर्ड संस्करण से श्लोक पढ़ते थे। यद्यपि टीका में निर्विशेषवादी दर्शन था, किन्तु स्वामीजी कहते थे कि अनुवाद नब्बे प्रतिशत यथार्थ थे। आज प्रातः उन्होंने राय को अपनी पाण्डुलिपि लाने के लिए ऊपर भेजा और एक घंटे तक वे उसके टंकित पृष्ठों से पढ़ते रहे।

जन्माष्टमी मनाने के विशेष नियम थे : उस दिन निराहार रहकर कीर्तन, अध्ययन तथा

कृष्णभावनामृत की चर्चा में समय बिताना चाहिए। यदि कोई बहुत अशक्त अनुभव करे, तो उसके लिए रसोई-घर में फल रखे थे। किन्तु अच्छा यही होगा भारत के भक्तों की तरह वे भी अर्धरात्रि तक उपवास रखें और फिर खाएँ। प्रभुपाद ने बताया कि भारतवर्ष में लाखों लोग—वे हिन्दू हों, चाहे मुसलमान या कोई और—भगवान् कृष्ण का जन्मदिन मनाते हैं और प्रत्येक मन्दिर में कृष्ण की लीलाओं के उत्सव मनाए जाते हैं और समारोह होते हैं।

अन्त में उन्होंने कहा, "अब मैं बताऊँगा कि दीक्षा क्या है। दीक्षा का अर्थ यह है कि गुरु शिष्य को स्वीकार करता है और उसका भार उठाने को राजी होता है और शिष्य गुरु को स्वीकार करता है और ईश्वर के समान उसकी पूजा करने को राजी होता है।" वे कुछ देर रुके रहे। कोई बोला नहीं। "कोई प्रश्न ?" उन्होंने पूछा। और जब कोई प्रश्न नहीं पूछा गया तो वे उठे और चले गये।

भक्तजन स्तंभित थे। उन्होंने उन्हें अभी क्या कहते सुना ? सप्ताहों तक वे इसी बात पर बल देते रहे कि जब कोई अपने आपको ईश्वर कहने लगे तो उसे कुत्ता समझो।

वैली बोला, "मेरा दिमाग उड़ गया है।"

हावर्ड ने कहा, "हर एक का दिमाग चकरा गया है। स्वामीजी ने तो जैसे बम छोड़ दिया है।"

उन्हें कीथ का ध्यान आया। वह बुद्धिमान था। उससे परामर्श करना चाहिए। किन्तु कीथ अस्पताल में था। परस्पर बातें करते हुए वे और भी चकरा उठे। स्वामीजी की बात ने उनके निर्णय को डगमगा दिया था। अन्त में वैली ने अस्पताल जाकर कीथ से मिलने का निर्णय लिया।

कीथ ने पूरा वृतान्त सुना : किस प्रकार स्वामीजी ने उनसे उपवास करने को कहा था; किस प्रकार उन्होंने अपनी पाण्डुलिपि से पढ़कर सुनाया था और किस प्रकार उन्होंने कहा कि वे दीक्षा का अर्थ बताएँगे और किस प्रकार हर एक ने कान लगाकर सुना था... और यह सब करने के बाद स्वामीजी ने मानो एक बम छोड़ दिया हो : "शिष्य गुरु को स्वीकार करता है और ईश्वर की भाँति उनकी पूजा करने को राजी होता है।" "कोई प्रश्न ?" स्वामीजी ने कोमल स्वर में यह प्रश्न पूछा था और तब वे वहाँ से चले गये थे। वैली ने स्वीकार किया, "मुझे मालूम नहीं कि मुझे अब दीक्षा लेनी चाहिए या नहीं। हमें ईश्वर की भाँति उनकी पूजा करनी होगी।"

कीथ ने उत्तर दिया, "यह तो तुम पहले से कर रहे हो। वे जो कुछ कहते हैं उसे तुम मानते हो।" उसने सलाह दी कि वे स्वामीजी से इस विषय में बात कर लें... दीक्षा के पूर्व। अतः वैली मन्दिर वापस लौटा और उसने होवर्ड से परामर्श किया। फिर वे दोनों एक साथ स्वामीजी के कमरे में गये। होवर्ड ने पूछा, "आपने आज सवेरे जो कुछ कहा है, क्या

उसका अर्थ है कि हम गुरु को ईश्वर के रूप में मानें?"

"उसका अर्थ है कि गुरु उसी प्रकार सम्मान का पात्र है जैसे ईश्वर, क्योंकि वह ईश्वर का प्रतिनिधि है।" प्रभुपाद ने शान्त भाव से उत्तर दिया।

"तो वह ईश्वर नहीं है?"

"नहीं," प्रभुपाद बोले। "ईश्वर ईश्वर है। गुरु उनका प्रतिनिधि है। इसलिए उसका वैसा ही आदर होना चाहिए जैसा ईश्वर का, क्योंकि वह आज्ञाकारी शिष्य को ईश्वर का बोध कराता है। स्पष्ट हो गया?" स्पष्ट हो चुका था।

• • •

पूरे दिन बिना भोजन किये रहना मानसिक और शारीरिक दोनों तरह से कष्टदायक था। जेन बेचैन थी। उसने प्रतिवाद किया कि सम्भवतः वह और अधिक नहीं रुक सकती। उसे अपनी बिल्ली की देखभाल के लिए जाना था। प्रभुपाद ने उसके विरुद्ध निर्णय देने का प्रयत्न किया, किन्तु वह चली ही गई।

अधिकांश भावी दीक्षार्थियों ने उस दिन कई घंटे काठ के चमचमाते लाल मनकों को पिरोने में बिताए; धागे के एक सिरे को खिड़की की छड़ या रेडिएटर से बाँधकर वे धागे में एक मनका डालते और उसे ऊपर की ओर सरकाकर मजबूती से गांठ लगा देते और हर मनके को पिरोने के साथ, हरे कृष्ण मंत्र का एक जप करते—यही भक्तियोग था—दीक्षा के लिए अपनी माला पिरोना और जप करना। जितनी बार वे मनके में गांठ लगाते, ऐसा लगता था कोई अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटना घटी हो। प्रभुपाद ने बताया कि भारत में भक्तजन प्रतिदिन कम से कम ६४ बार माला फेरते हैं। माला के १०८ मनकों में प्रत्येक बार हरे कृष्ण मंत्र के जप से एक फेरी पूरी होती है। स्वामीजी के गुरु महाराज ने कहा था कि जो प्रतिदिन ६४ बार माला नहीं फेरता, वह पतित है। पहले कुछ बालकों ने सोचा कि उन्हें भी ६४ बार माला फेरनी होगी और वे घबरा गये : इसमें तो पूरा दिन लग जायेगा। यदि ६४ बार माला फेरनी पड़ी तो कोई अपने काम पर कैसे जायेगा? कोई ६४ बार माला का जप कैसे कर सकता है? तब किसी ने बताया कि स्वामीजी ने उससे कहा कि पच्छिम में कम से कम ३२ बार माला जपना पर्याप्त होगा। वैली बोला कि उसने स्वामीजी को २५ बार ही कहते सुना है, किन्तु यह भी असम्भव लगता है। तब प्रभुपाद ने न्यूनतम की सीमा निर्धारित कर दी—१६ बार प्रतिदिन, बिना नागा के। जो भी दीक्षा ग्रहण करेगा, उसे इसकी प्रतिज्ञा लेनी होगी।

माला-पिरोने, मंत्र-जपने, पढ़ने और ऊंघने का सिलसिला रात के ११ बजे तक चलता रहा। तब हर एक को ऊपर स्वामीजी के कमरे में बुलाया गया। जब वे आंगन से

पंक्तिबद्ध जा रहे थे, तो उन्हें वातावरण में असामान्य शान्ति का अनुभव हुआ और दीवार की दूसरी ओर, ह्यूस्टन सड़क में बिल्कुल सन्नाटा था। आकाश में चन्द्रमा नहीं था।

जब स्वामीजी के सभी अनुयायी फर्श पर बैठ गये और कागज की प्लेटों में संतोषपूर्वक प्रसाद ग्रहण करने लगे, तब स्वामीजी भी उनके मध्य बैठ गये और भगवान् कृष्ण के जन्म की कहानियाँ सुनाने लगे। कृष्ण का आविर्भाव पांच हजार वर्ष पूर्व ऐसी ही रात्रि में हुआ था। वे वसुदेव और देवकी के पुत्र थे और राजा कंस के कारागार में अर्धरात्रि में प्रकट हुए थे। उनके जन्म के तुरन्त बाद उनके पिता वसुदेव उन्हें वृन्दावन ले गये थे, जहाँ गोप नन्द महाराज ने अपने पुत्र के रूप में उनका पालन किया।

स्वामीजी आध्यात्मिक उन्नति के लिए शुद्धि की आवश्यकता पर भी बोले। उन्होंने कहा, "केवल पवित्र शब्दों का जप करना ही पर्याप्त नहीं होता। मनुष्य को भीतर और बाहर से शुद्ध भी होना चाहिए। शुद्धता से जप करने से आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त होती है। जीवात्मा इसलिए अशुद्ध हो जाता है, क्योंकि वह भौतिक सुख भोगना चाहता है। किन्तु जो अशुद्ध है, वह कृष्ण का अनुयायी बनकर और अपने सारे कार्य कृष्णार्पण करके शुद्ध बन सकता है। कृष्णभावनामृत में नये दीक्षित भक्तों में अल्पकाल के बाद प्रयास में ढिलाई आने की प्रवृत्ति पाई जाती है, किन्तु आध्यात्मिक उन्नति करते रहने के लिए तुम्हें चाहिए कि ऐसे लोभ का प्रतिरोध करो और अपने प्रयासों और भक्ति में निरन्तर वृद्धि करो।"

• • •

माइकेल ग्रांट : *मैंने दीक्षा के बारे में पहले पहल उसके सम्पन्न होने के ठीक एक दिन पहले सुना। मैं अपने संगीत में मस्त था और वहाँ जाता नहीं था। मैं सेकंड एवन्यू से दीक्षा लेने वाले एक व्यक्ति के साथ जा रहा था और उसने मुझे बताया कि दीक्षा-समारोह जैसी कोई चीज होने जा रही थी। मैंने पूछा कि यह क्या होता है, तो उसने बताया कि, "जो कुछ मैं जानता हूँ, उसका अर्थ यह है कि तुम गुरु को ईश्वर के रूप में स्वीकार करते हो।" यह मेरे लिए एक आश्चर्य की बात थी। मैं नहीं जानता था कि इसके बारे में क्या करूँ। किन्तु मैंने इसे पूर्णतया गम्भीरता से नहीं लिया और जिस प्रकार चलते ढंग से इसकी चर्चा मुझसे की गई, उससे मुझे लगा कि यह कोई महत्त्वपूर्ण मामला नहीं है। उसने मुझसे यों ही पूछ लिया कि क्या मैं इसमें शामिल होने जा रहा हूँ और मैंने भी यों ही उत्तर दे दिया, "हाँ, मैं सोचता हूँ कि मैं शामिल हूँगा; मैं एक बार इसे करके देखूँगा।"*

जेन का विचार था कि वह एक आज्ञाकारी शिष्या नहीं बन पाएगी। और दीक्षा तो उसे एक बहुत ही डरावनी चीज लगती थी। वह स्वामीजी को पसन्द करती थी, विशेषकर उनके साथ भोजन बनाना। लेकिन माइक ने उसे विश्वास दिलाया—वह दीक्षा लेने जा रहा

था, इसलिए उसे विश्वात दिलाया गया की जेन को भी उसके साथ जाना चाहिए।

कार्ल ईयरजेन्स अपने अध्ययनों से दीक्षा के सम्बन्ध में थोड़ा-बहुत जानता था और दूसरों की अपेक्षा उसे कहीं अधिक पता था कि दीक्षा बहुत गम्भीर प्रतिबद्धता थी। उसे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि स्वामीजी दीक्षा दे रहे थे और वह दीक्षा-ग्रहण करने के विषय में बहुत सावधान था। वह जानता था कि दीक्षा का अर्थ था अवैध यौन-सम्बन्ध, मादक द्रव्य-सेवन और मांसाहार का सर्वथा त्याग और दीक्षा-ग्रहण किये हुए शिष्य द्वारा अन्यों तक गुरु के उपदेशों के प्रचार का नया उत्तरदायित्व वहन करना। स्वामीजी के सेकंड एवन्यू चले जाने के बाद कार्ल के लिए आकर्षण पहले से ही कम हो चला था, किन्तु फिर भी उसने दीक्षा-समारोह में उपस्थित रहने का निर्णय लिया।

बिल एप्स्टीन ने कभी भी अपने आपको गम्भीर शिष्य नहीं माना था। दीक्षा-समारोह का आयोजन स्वामीजी के कार्यकलाप का एक और आयाम था और कोई चाहे तो उसे गम्भीरता से ले, या न ले। उसने सोचा कि दीक्षा लेना ठीक ही रहेगा, चाहे कोई उसके विषय में गम्भीर न भी हो। वह लेकर देखेगा।

केरल बेकर को जानकर आश्चर्य हुआ कि कुछ लोग दीक्षा लेने जा रहे थे, यद्यपि उनका इरादा अपनी बुरी आदतों को छोड़ने का नहीं था। जब से स्वामीजी अपने पुराने स्थान से चले गये थे कार्ल ने उनके यहाँ नियमित रूप से जाना बन्द कर दिया था और उसकी इच्छा दीक्षा लेने की नहीं थी। उसने सोचा शायद स्वामीजी स्त्रियों को दीक्षित करेंगे भी नहीं।

राबर्ट नेलसन स्वामीजी को भूला नहीं था और जब भी सम्भव हुआ, वह उनकी सहायता करना चाहता था। लेकिन सिवाय कभी कभी मित्र भाव से जाने के, उसने स्वामीजी के यहाँ जाना बन्द कर दिया था। वह अपने ही कार्यों में व्यस्त रहता। वह अब भी अपटाउन में रह रहा था और लोअर ईस्ट साइड से उसका कुछ लेना-देना नहीं था।

जेम्स ग्रीन ने सोचा कि उसमें इतनी शुद्धता नहीं थी कि वह दीक्षा ले सके : "दीक्षित होने वाला मैं कौन होता हूँ?" लेकिन स्वामीजी ने उसे स्टोरफ्रंट में कुछ लाने के लिए कहा था। "मैं गया और यह मान लिया गया कि मुझे दीक्षा-ग्रहण करनी है। इसलिए मैंने सोचा, क्यों नहीं?"

स्टैनली नियमित रूप से फिर जप कर रहा था और अपनी सनक को पीछे छोड़ चुका था। वह स्वामीजी और उनके अनुयायियों से चिपका हुआ था। उसने अपनी माँ से पूछा कि क्या वह दीक्षा ले ले; उसकी माँ बोली—यह ठीक रहेगा।

स्टीव को इसके बारे में सोचने को और समय चाहिए था।

कीथ अस्पताल में था।

ब्रूस अभी केवल एक या दो सप्ताह से आ रहा था, इसलिए उसके लिए दीक्षा लेना अभी बहुत जल्दी थी।

चक मन्दिर के नियमित आध्यात्मिक जीवन से एक सप्ताह के अवकाश पर था, अतः वह दीक्षा के विषय में जानता ही नहीं था।

• • •

किसी से न सिर मुंड़ाने को कहा गया, न बाल कटाने और न कपड़े बदलने को। किसी ने प्रभुपाद को परम्परागत गुरु-दक्षिणा नहीं दी, जो गुरु के प्रति शिष्य की कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए भेंट-स्वरूप होती है। किसी ने घरेलू कार्यों में भी उनका हाथ नहीं बंटाया। अतः स्वामीजी को भोजन बनाने का अधिकांश कार्य और दीक्षा की अन्य तैयारियाँ स्वयं करनी पड़ीं। वे अपने बालकों की मनोवृत्ति से भलीभाँति अवगत थे और किसी पर कोई कार्य लादना नहीं चाहते थे। कुछ नवदीक्षितों को दीक्षा लेने के बाद तक यह नहीं मालूम था—और यह उन्होंने पूछकर जाना—कि शिष्यों के लिए चार नियम अनिवार्य थे—और वे थे मांसाहार न करना, अवैध यौनाचार न करना, मादक-द्रव्य सेवन न करना तथा जुआ न खेलना। जब शिष्यों ने इनके विषय में पूछा तो स्वामीजी का उत्तर था, "मुझे प्रसन्नता है कि आखिर तुम लोग यह पूछ तो रहे हो।"

अब साक्षात् वैदिक यज्ञ होना था, जिसमें स्वामीजी के आवास के सामने वाले कमरे में अनुष्ठानिक अग्नि को प्रज्वलित करना था। कमरे के मध्य में यज्ञशाला थी जिसमें दो फुट वर्गाकार और चार इंच ऊंची ईंटो की वेदी थी, जो मिट्टी से ढकी थी। मिट्टी आंगन से ली गई थी और ईंटे पास की एक ध्वस्त इमारत से लाई गई थीं। वेदी की चारों ओर ग्यारह केले, घृत, तिल, अक्षत जौ, पांच तरह के रंग-चूर्ण और प्रकाश करने की सामग्री थी। सामने के कमरे की शेष जगह ग्यारह दीक्षार्थियों द्वारा घिरी थी। वे यज्ञशाला की चारों ओर पालथी मारे बैठे थे। हाल में एकत्रित अतिथि खुले दरवाजे से उत्सुकतापूर्वक यह दृश्य देख रहे थे। स्वामीजी के अतिरिक्त सभी के लिए यह नया और विचित्र दृश्य था और इस समारोह की प्रत्येक क्रिया उन्हीं के निर्देशन में हो रही थी। जब कुछ लड़कों ने अपने-अपने मस्तकों पर तिलक ठिक तरह न लगा देखा, तो स्वामीजी ने बड़े धैर्य से अपनी उंगली से उनके मस्तकों पर स्वच्छ छोटासा "V" चिह्न बना दिया।

मिट्टी की वेदी के समक्ष बैठे हुए स्वामीजी वहाँ एकत्र जन-समूह को देख रहे थे। वह जन-समूह लोअर ईस्ट साइड के युवा हिप्पियों से किसी भी तरह भिन्न नहीं था, जो आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, संगीत या अनेक अन्य उत्सवों पर एकत्र हुआ था। उनमें से कुछ तो मात्र नये दृश्य का आनन्द लेने वाले थे, किन्तु कुछ स्वामीजी के परम भक्त थे। जो भी

हो, जिज्ञासा प्रत्येक व्यक्ति में थी। स्वामीजी ने पूरे समारोह के दौरान हरे कृष्ण मंत्र का धीरे धीरे जप करते रहने का अनुरोध किया था। यह जप अब अनवरत गुंजार का रूप धारण कर चुका था, जो इस वैदिक संस्कार के प्रधान पुरोहित के रूप में स्वामीजी की रहस्यमय भावभंगी के साथ साथ बराबर चल रही थी।

उन्होंने एक दर्जन अगरबत्तियाँ जलाकर शुभारम्भ किया। फिर जल से तर्पण किया। बाएं हाथ में एक आचमनी लेकर पात्र से अपने दाएं हाथ में तीन बूंद जल डाला और उससे आचमन किया। उन्होंने यह क्रिया तीन बार की। चौथी बार उन्होंने जल का आचमन नहीं किया प्रत्युत उसे अपने पीछे फर्श पर गिरा दिया। तब उन्होंने आचमनी और पात्र को दीक्षार्थियों में घुमाया, जिन्होंने स्वामीजी को जो कुछ करते देखा था, उसका अनुकरण करने का प्रयत्न किया। जब उनमें से कुछ ने जल को गलत हाथ में लिया या उसका आचमन गलत ढंग से किया, तो स्वामीजी ने धैर्यपूर्वक उनको सुधार दिया।

उन्होंने कहा "अब मैं जैसा करूँ, वैसा ही करो।" तब उन्होंने वैदिक शुद्धि-मंत्र का एक-एक अक्षर उनसे दुहरवाया :

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥
श्री विष्णुः श्री विष्णुः श्री विष्णुः

नवदीक्षित रुक-रुककर शब्दों का उच्चारण करने का प्रयत्न कर रहे थे, क्योंकि इसके पूर्व उन्होंने इन शब्दों को कभी नहीं सुना था। तब उन्होंने अनुवाद करके बताया : "चाहे अपवित्र हो अथवा पवित्र, या किसी भी प्रकार की अवस्थाओं से क्यों न गुजर चुका हो, जो कमलनयन भगवान् का स्मरण करता है, वह बाहर तथा अन्दर से पवित्र हो जाता है।" उन्होंने तीन बार जल का आचमन किया और ज्यों ज्यों जलपात्र एक नवदीक्षित से दूसरे के पास जाता रहा और वापस उनके पास आता रहा, हरे कृष्ण मंत्र गुंजायमान होता रहा। स्वामीजी ने तीन बार—*ॐ अपवित्रः* मंत्र का जप किया और कराया। तत्पश्चात् उन्होंने अपना एक हाथ उठाया और ज्योंही जप की मर्मर ध्वनि शान्त हुई, उन्होंने अपना व्याख्यान आरम्भ कर दिया।

व्याख्यान के बाद स्वामीजी ने भक्तों से एक-एक करके अपनी अपनी मालाएं देने को कहा और उन पर जप आरम्भ कर दिया। हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे। हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे। प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किये जा रहे जप के शब्दों से कमरा भर गया। जब किसी माला की फेरी पूरी हो जाती, वे माला के स्वामी को बुलाते और माला को ऊपर की ओर पकड़कर जप की विधि बताते। तब वे नवदीक्षित के दिव्य नाम की घोषणा करते। शिष्य अपनी माला वापस लेता, फर्श पर झुककर नमन करता और इस

मंत्र का उच्चारण करता :

नमः ओम् विष्णुपादाय कृष्ण प्रेष्ठाय भूतले।
श्रीमते भक्तिवेदान्त-स्वामिन् इति नामिने॥

"मैं श्री श्रीमद् भक्तिवेदान्त स्वामी को सादर नमस्कार करता हूँ, जो भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमलों में शरण ग्रहण करने के कारण उन्हें अत्यन्त प्रिय हैं।"

कुल ग्यारह दीक्षित थे, अतः ग्यारह मालाएँ थीं और जप एक घंटे से अधिक देर तक चलता रहा। प्रभुपाद ने हर लड़के को गले की एक माला दी और कहा कि यह कुत्ते के पट्टे के समान है, जिससे भक्त की पहचान कृष्ण के कुत्ते के रूप में हो सकती है।

अपनी माला और अपना नया नाम (उमापति) पाने के बाद वैली, होवर्ड की बगल में अपने स्थान पर लौट आया और बोला, "कितना आश्चर्यजनक था यह! अपनी माला प्राप्त करना कितना आश्चर्यजनक है।" एक-एक करके प्रत्येक नवदीक्षित को अपनी माला और अपना आध्यात्मिक नाम प्राप्त हुआ। इस प्रकार होवर्ड को हयग्रीव, वैली को उमापति, बिल को रवीन्द्रस्वरूप, कार्ल को कर्लापति, जेम्स को जगन्नाथ, माइक को मुकुंद, जेन को जानकी, राय को रायराम और स्टेनली को स्त्र्यधीश नाम मिल गया। एक दूसरा स्टेनली, जो ब्रुकलिन में काम करता था और जैनोस जो मान्ट्रियल में कालेज का छात्र था, उसी रात स्वामीजी के पास आये। स्वामीजी से इनका बाहर का सम्बन्ध था। इन्होंने भी औरों के साथ दीक्षा ग्रहण की—इन्हें सत्यव्रत और जनार्दन नाम मिले।

तब स्वामीजी ने अपने समक्ष बनी मिट्टी की वेदी के आर-पार रंग छिड़ककर हवन आरम्भ किया। उपस्थित जन-समूह मंत्र-मुग्ध होकर उनकी प्रत्येक रहस्यमयी क्रिया का अवलोकन करता रहा—उन्होंने लकड़ी के छोटे-छोटे टुकड़े और टहनियाँ उठा उठाकर उन्हें घी में डुबोया और मोमबत्ती की लौ से जलाकर वेदी के मध्य में रखा और यज्ञ के लिए अग्नि तैयार की। तब उन्होंने एक पात्र में तिल, जौ और घी मिलाया और इस मिश्रण को सबके बीच घुमा दिया। प्रत्येक नवदीक्षित ने इसमें से अंजुलि-भर मिश्रण अग्नि में डालने के लिए ले लिया। तदनन्तर उन्होंने संस्कृत में प्रार्थना का पाठ आरम्भ किया और सबों से उसे दुहराने के लिए कहा। प्रत्येक प्रार्थना का अन्त तीन बार "स्वाहा" शब्द के उच्चारण से होता और प्रत्येक "स्वाहा" के साथ नवदीक्षित तिल-जौ का कुछ मिश्रण अग्नि में डाल देते। स्वामीजी घी डालते, समिधाएँ डालते और एक के बाद एक मंत्र पढ़ते जाते थे। अन्त में यज्ञ-अग्नि पूरी तरह प्रज्वलित हो गई। मंत्र पढ़े जाते रहे, घी डाला जाता रहा और अग्नि-शिखाएँ बढ़ती गईं, जिससे कमरा गरम हो उठा।

पन्द्रह-बीस मिनट बाद स्वामीजी ने प्रत्येक नवदीक्षित से अग्नि में एक-एक केला डालने को कहा। अग्नि में ग्यारह केलों का ढेर लग जाने से अग्नि-ज्वालाएँ शान्त होने

लगीं और धुआँ गहरा हो गया। कुछ नवदीक्षित उठ पड़े और खाँसते हुए दूसरे कमरे में भागने लगे और अतिथिगण बड़े हाल में चले गये। किन्तु स्वामीजी बचे हुए घी और मिश्रण को अग्नि में डालते रहे। उन्होंने कहा "इस प्रकार के धुएँ से कोई कष्ट नहीं होता। अन्य प्रकार के धुएँ से कष्ट होता है, लेकिन इससे नहीं होता।" यद्यपि सभी की आँखे धुएँ से उत्तेजित हो रही थीं और उनसे आँसू निकल रहे थे, लेकिन स्वामीजी ने खिड़कियाँ बन्द रखने को कहा। इसलिए अधिकांश धुआँ कमरे के भीतर ही रह गया और किसी पड़ोसी ने कोई शिकायत नहीं की।

स्वामीजी विस्फारित ओंठों से हँसे, विष्णु की प्रज्वलित जिह्वा अर्थात् यज्ञ की अग्नि के समक्ष अपने आसन से उठे और ताली बजा-बजाकर हरे कृष्ण का कीर्तन करने लगे। एक के आगे एक पाँव रखते हुए और इस ओर से उठकर दूसरी ओर झूमते हुए, वे अग्नि के सामने नाचने लगे। उनके शिष्यों ने नाचने और कीर्तन में उनका साथ दिया। धुआँ कम हो गया। उन्होंने प्रत्येक शिष्य को मेज के ऊपर रखे पंचतत्त्व के चित्र में भगवान् चैतन्य के चरणों से अपनी माला का स्पर्श करने को कहा। अन्त में उन्होंने खिड़कियाँ खुलवा दीं। समारोह का अन्त और कमरे की हवा के साफ होने के बाद स्वामीजी हँसकर बोले— "कमरे में इतना धुआँ हो गया था कि मैंने समझा कि कोई अग्निशामक दल (फायर ब्रिगेड) न बुला ले।"

प्रभुपाद प्रसन्न थे। उन्होंने सभी भक्तों और अतिथियों को प्रसाद वितरण किये जाने की व्यवस्था की। यज्ञ, प्रार्थनाओं, प्रतिज्ञाओं तथा प्रत्येक के मुख से हरे कृष्ण कीर्तन होने के कारण शुभ वातावरण उत्पन्न हो गया था। सब कुछ प्रगतिभर था। अब पाश्चात्य जगत में भी नवदीक्षित भक्त हो गये थे। अन्त में अधिकांश दीक्षित अपने अपने घर चले गये और दीक्षा-समारोह के बाद सफाई के लिए केवल गुरु महाराज रह गये।

• • •

सितम्बर १०

दीक्षा-समारोह के अगले दिन प्रभुपाद सवेरे अपने अपार्टमेंट में बैठे *श्रीमद्भागवत* पर एक टीका के अंश पढ़ रहे थे। उस समय बृहत् संस्कृत संस्करण उनके सामने उनकी मेज पर रखा था। वे सींग की कमानी वाला चश्मा लगाए थे जिससे उनकी भाव-भंगिमा बदल गई थी और वे प्रकाण्ड विद्वान दिख रहे थे। वे केवल पढ़ने के लिए चश्मा लगाते थे; इससे ऐसा लगता था कि अब वे आचार्यों जैसे गहन चिन्तन में लीन हो गये थे। उनका कक्ष शान्त था। मध्य प्रात:कालीन चमकता हुआ सूर्य खिड़की की राह से प्रकाश और ऊष्मा दे रहा था।

एकाएक किसी ने दरवाजा खटखटाया। "हाँ, आ जाइए" चश्मा हटाते हुए उन्होंने ऊपर देखा और कहा। माइक और जेन ने, जिनका नाम अब मुकुंद और जानकी था, दरवाजा खोला और अन्दर आ गये। स्वामीजी ने उन्हें मिलने के लिए बुलाया था। 'हाँ, हाँ, अन्दर आ जाइए।' कहते हुए वे मुसकराए, वे दोनों अन्दर आ गये और अपने पीछे उन्होंने दरवाजा बन्द कर दिया। दोनो प्रफुल्लचित्त युवा अमेरिकन थे। अपने भाव-व्यंजक नेत्रों से स्वामीजी प्रसन्न लग रहे थे। वे दोनों उनके सामने बैठ गये और प्रभुपाद ने विनोद में उन्हें उनके नवदीक्षित नामों से सम्बोधित किया, "तो तुम दोनों साथ रह रहे हो, किन्तु अब तुम लोग दीक्षा की गम्भीर प्रतिज्ञाएं ले चुके हो। तो उसके विषय में तुम लोग क्या करोगे?"

मुकुंद घबरा गया, "अच्छा, तो कृष्णभावनामृत में प्रेम के लिए कोई स्थान नहीं है क्या?"

स्वामीजी ने सिर हिलाया, "हाँ, है। इसलिए मैं कह रहा हूँ कि तुम दोनों विवाह क्यों नहीं कर लेते?"

वे राजी हो गये कि विचार अच्छा था और प्रभुपाद ने तुरन्त ही उनके विवाह के लिए दो दिन बाद की तिथि निश्चित कर दी।

प्रभुपाद ने कहा कि वे एक बड़ा भोज देंगे और विवाहोत्सव अपने अपार्टमेंट में करेंगे। उन्होंने मुकुंद और जानकी से कहा कि वे अपने सम्बन्धियों को आंमत्रित कर लें। मुकुंद और जानकी दोनों ओरीगान में पलकर बड़े हुए थे और उनके परिवार के सदस्यों को उतने थोडे नोटिस पर इतनी दूर की यात्रा तय करना सम्भव नहीं लगा। केवल जानकी की बहिन, जोन, आने को राजी हुई।

जोन : *मैं बिल्कुल नहीं जानती थी कि यह किस तरह का विवाह होगा। मैं केवल इतना जानती थी कि उनकी भेंट किसी स्वामी से हो गई थी और उनसे वे संस्कृत सीख रहे थे और सेकंड एवन्यू में उनके एक छोटे से स्टोरफ्रंट मन्दिर में जाते थे। जब मैं स्वामीजी से मिली, तो वे अपने सामनेवाले कमरे में खिड़की के पास सूर्य के प्रकाश में बैठे थे। उनकी चारों ओर प्रसाद के पात्र थे, जिसे वे अपने भक्तों में वितरित कर रहे थे, जो उनके इर्द-गिर्द दीवार से सटे बैठे थे। मैं macrobiotics की छात्रा थी और दोपहर में इसे खाने की उतनी शौकीन नहीं थी। जब मैं कमरे में प्रविष्ट हुई, तो स्वामीजी ने पूछा, "यह कौन है?" मुकुंद ने बताया, "यह जानकी की बहिन जोन है; यह विवाहोत्सव में सम्मिलित होने के लिए ओरीगान से आई है।" स्वामीजी बोले, "ओह! ओरीगान कहाँ है?" मुकुंद ने उत्तर दिया, "ओरीगान यहाँ से तीन हजार मील दूर है, अमेरिका की दूसरी ओर। स्वामीजी ने कहा, "ओह! इतनी दूर से आ रही हो, बहुत अच्छा। परिवार के अन्य सदस्य कब पहुँच रहे हैं?" तब मैंने कहा, "स्वामीजी, विवाहोत्सव में सम्मिलित होने*

केवल मैं ही आई हूँ।" उन्होंने कहा, "कोई बात नहीं। बहुत अच्छा है कि तुम आ गई हो। बैठ जाओ और कुछ कृष्णप्रसाद ग्रहण करो।"

उन्होंने मुझे कुछ दाल, रसेदार सब्जी, दही, सलाद और चपातियाँ दीं। चूँकि मैं macrobiotics की अनुयायी थी, इसलिए यह सारा प्रसाद मेरे लिए स्वादहीन था। सच तो यह है कि पूरे समय यह मेरे गले में फंसा रहा, किन्तु मुझे याद है कि मैं सारे समय उन तेजस्वी सुन्दर व्यक्ति को देखती रही, जो इतने उत्सुक थे कि उनके बनाए प्रसाद को मैं ग्रहण करूँ। इसलिए मैं सब खा गई, लेकिन मन में मैंने निर्णय लिया कि यह अन्तिम बार है, जब मैं भक्तों के साथ यह लंच खा रही हूँ।

किसी तरह मैंने खाना खत्म किया। स्वामीजी जो बराबर मुझे देख रहे थे, बोले, "और चाहिए? और चाहिए?" मैंने कहा, "नहीं, धन्यवाद। मेरा पेट भर गया है। प्रसाद बहुत अच्छा था। लेकिन मैं और अधिक नहीं खा सकती।" इस तरह प्रसाद-वितरण समाप्त हुआ और सब लोग सफाई के लिए उठ खड़े हुए। तब स्वामीजी बोले कि वे मुकुंद, जानकी और मुझसे एक साथ मिलना चाहते हैं—दूसरे दिन विवाह की तैयारियों के सम्बन्ध में।

जब हम तीनों उनके साथ कमरे में बैठे थे तो स्वामीजी कोने में गये जहाँ एक बड़ा-सा पात्र रखा था जिसकी बाए की ओर जमी हुई शक्कर के रवे लगे थे। मैंने सोचा, "ओह! यह कोई मिष्ठान्न लगता है। किन्तु मैं शायद और कुछ भी नहीं खा सकती थी।" लेकिन उन्होंने किसी प्रकार पात्र में हाथ डाला और उसमें एक बड़ा और गोल गुलाबजामुन जिससे शीरा टपक रहा था, निकाल लिया। मैं बोली, "अरे नहीं, मैं इतना खा चुकी हूँ, मैं और नहीं खा सकती।" उन्होंने कहा, "ओह, लो, लो।" मुझे हाथ बढ़ाना पड़ा और उसमें से एक गुलाबजामुन लेना पड़ा। गुलाबजामुन खत्म करते करते मैंने यह ठान लिया कि यहाँ भविष्य में फिर कभी नहीं आऊँगी।

तब वे समझाकर बताने लगे कि वैदिक परम्परा में किस तरह कन्या के परिवार की ओर से ही विवाह के लिए शानदार व्यवस्था होती थी। और चूँकि मैं परिवार की एकमात्र सदस्या हूँ, जो विवाह में सहायता करने आई थी, इसलिए मुझे अगले दिन विवाह के भोज की तैयारी में उनकी सहायता के लिए पहुँच जाना चाहिए। अत: अगले दिन सवेरे नौ बजे जब जानकी यज्ञ के लिए कमरा सजा रही थी और उसके आर-पार वन्दनवार और पुष्प मालाएँ बाँध रही थी, मैं स्वामीजी से मिलने ऊपर गई।

जब मैं पहूँची, तो उन्होंने तुरन्त मुझे सामान खरीदने बाजार भेज दिया—पाँच या छह चीजों की खरीददारी करनी थी। उनमें से एक चीज बाजार में कहीं नहीं मिली, यद्यपि मैंने कई दुकानदारों से बात की। जब मैं वापस आई तो उन्होंने पूछा, "लिस्ट के सभी सामान

मिल गये?" मैंने कहा, "हाँ, सिवाय एक के, बाकी सब मिल गये हैं।" उन्होंने पूछा, "वह एक क्या है?" मैंने कहा, "कोई नहीं जानता कि तूमर क्या है।"

उन्होंने मुझ से हाथ धुलवाये और पाँच पौंड आटे की थैली के साथ अपने सामने के कमरे में फर्श पर बैठा दिया। वहाँ एक पौंड मक्खन और एक घड़ा पानी भी रखवाया। उन्होंने मेरी ओर देखा और कहा, "क्या तुम इसे गूँथकर मुलायम लोई बना सकती हो?" मैंने उत्तर दिया, "आप कैसी लोई चाहते हैं? किस काम के लिए?" उन्होंने पूछा, "तुम्हारी आयु क्या है?" मैंने उत्तर दिया, "स्वामीजी, मैं २५ साल की हूँ।" वे बोले, "तुम २५ साल की हो और मध्यम दर्जे की मुलायम लोई नहीं बना सकती? भारत में यह आम बात है कि ५ साल से अधिक की कोई भी लड़की ऐसी लोई बनाने का अच्छा अनुभव रखती है। लेकिन चिन्ता मत करो। मैं करके तुम्हें दिखाऊँगा।" अत: बड़ी दक्षता के साथ उन्होंने आटे का थैला खाली किया और वे हाथ की अंगुलियों के सिरों से आटे में घी मिलाते गये जब तक कि वह मोटा मिश्रण नहीं बन गया। तदनन्तर उन्होंने आटे के बीच एक गड्ढा बनाया, उसमें उचित मात्रा में पानी मिलाकर विशेषज्ञ की भाँति गूँधकर उसे मखमली चिकनाई वाले मध्यम दर्जे की मुलायम लोई में बदल दिया। तब वे उबले हुए आलुओं की एक थाली ले आये, उंगलियों के सिरों से उन्हें मसल डाला और उन पर मसाले छिड़कने लगे। उन्होंने मुझे करके दिखाया कि आलुओं की कचौड़ियाँ कैसे बनाई जाती हैं। एक तरह की वे तली हुई भारतीय पेस्ट्री होती हैं, जिनमें मसालेदार आलू की पिठी भरी होती है। ग्यारह बजे से तीसरे पहर पाँच बजे तक मैं उस कमरे में बैठी कचौड़ियाँ बनाती रही। इस बीच उसी तीसरे पहर स्वामीजी ने शाकाहारी व्यंजनों की पन्द्रह और किस्में तैयार कर डालीं। हर व्यंजन इतनी बड़ी मात्रा में था कि वह चालीस व्यक्तियों के लिए पर्याप्त था। और उन्होंने उन्हें अकेले ही अपनी छोटी-सी संकरी रसोई में तैयार किया था।

उस तीसरे पहर गर्मी-सी थी और मुझे पसीना आ रहा था। मैंने पूछा, "स्वामीजी, क्या एक गिलास पानी मिल सकता है?" उन्होंने दरवाजे की ओर सिर फेरा और कहा, "जाओ, अपने हाथ धो डालो।" मैंने यह तुरन्त किया और जब मैं लौटी तो स्वामीजी ने मुझे पानी का गिलास दिया। उन्होंने मुझे समझाया कि जब भगवान् के लिए प्रसाद तैयार कर रहे होते हैं, तो उस समय कोई चीज खानी या पीनी नहीं करना चाहिए। इसलिए पानी पीने के बाद मैं फिर भीतर गई, अपने हाथ धोए और फिर लौटकर आ बैठी। तीसरे पहर लगभग दो बजे मैंने कहा, "स्वामीजी, क्या एक सिगरेट मिल सकती है?" उन्होंने कोने की तरफ सिर घुमाया और कहा, "जाओ, अपने हाथ धो डालो।" मैंने वैसा ही किया और जब मैं वापस आई तो उन्होंने कृष्ण-चेतना के चार नियम मुझे समझाए। मैं कचौड़ियाँ

तैयार करती रही। साढ़े तीन या चार बजे के करीब कमरे में बहुत गरमी हो गई थी और जब स्वामीजी कोई तैयार व्यंजन कमरे में रखने आये, उस समय मैं अपनी बाहों और हाथ से अपना माथा पोंछ रही थी। उन्होंने मुझे देखा और कहा, "जाओ और अपने हाथ धोकर आओ। मैंने फिर वही किया और लौटने पर उन्होंने मुझे गीले कागज का एक तौलिया दिया। उन्होंने समझाया कि कृष्ण के लिए प्रसाद बनाने में स्वच्छता एवं शुद्धता के कुछ निश्चित मानदण्डों की आवश्यकता होती है, जो उनसे भिन्न हैं, जिनसे मैं अभ्यस्त थी।

• • •

विवाहोत्सव में लगभग तीस लोग सम्मिलित हुए। सजावट वैसी ही थी, जैसी तीन दिन पहले दीक्षा-समारोह के लिए की गई थी, सिवाय इसके कि यह अधिक तड़क-भड़क वाली थी और भोज अधिक शानदार और खर्चीला था। स्वामीजी का सामने वाला कमरा अनन्नास की टहनियों से सजाया गया था और उसके ऊपर एक छोर से दूसरे तक, वंदनवार और फूलपत्तियों की झालरें टांगी गई थीं। कुछ नये दीक्षित शिष्य गले में मोटे लाल मनकों की अपनी मालाएँ पहने हुए आये। वे प्रतिज्ञा ले चुके थे—प्रतिदिन माला की १६ फेरियाँ—और वे अपनी मालाओं पर वैसे ही जप करते, जैसाकि स्वामीजी ने बताया था। प्रसन्नतापूर्वक, यद्यपि मस्तिष्क पर जोर देकर, वे अपने साथियों को उनके आध्यात्मिक नामों से पुकारते।

जानकी : *स्वामीजी ने कहा कि मुझे अपने विवाह के अवसर पर साड़ी पहननी चाहिए और वह रेशम की होनी चाहिए। मैंने पूछा किस रंग की? तो वे बोले लाल रंग की। अतएव मुकुंद ने मेरे लिए एक बड़ी सुन्दर साड़ी खरीद डाली और कुछ सुन्दर आभूषण भी।*

स्वामीजी के मित्र जानकी को प्रायः देखा करते थे, क्योंकि वह मुकुंद के साथ नित्य आती थी। आमतौर पर वह शृंगार-पटार नहीं करती थी और बहुत सादे कपड़े पहनती थी। इसलिए उन्हें आश्चर्य हुआ और थोड़ा संकोच भी, जब उन्होंने जानकी को आभूषण पहने, सजी-धजी और चमकती लाल साड़ी में प्रवेश करते देखा। दुल्हन जानकी के बाल जूड़े के रूप में बांधे गये थे और अण्डाकार रूपहले तारकशी के आभूषण से अलंकृत किये गये थे। उसने चांदी के भारी कर्णफूल पहन रखे थे, जिन्हें मुकुंद ने फिफ्थ एवन्यू की एक महंगी भारतीय आयात दुकान से खरीदा था। उसने हाथों में चांदी के कंगन भी पहने थे।

प्रभुपाद ने मुकुंद और जानकी को विवाह-मंडप में यज्ञ की वेदी की दूसरी ओर अपने सामने बैठने को कहा। जैसाकि उन्होंने दीक्षा के समय किया था, उन्होंने अगरबत्तियाँ जलाईं और वर-वधू को जल से शुद्ध किया; शुद्धि-मंत्र पढ़ा और तब बोलना

आरम्भ किया। उन्होंने समझाकर बताया कि कृष्ण-चेतना में पति और पत्नी के बीच सम्वन्ध कैसा होना चाहिए, उन्हें एक-दूसरे की सेवा कैसे करनी चाहिए और कृष्ण की सेवा कैसे करनी चाहिए। तव प्रभुपाद ने जानकी की वहिन से कहा कि वह जानकी को औपचारिक रूप में, मुकुंद की पत्नी के रूप में, अर्पित करे। उसके बाद मुकुंद ने वही कहा जो स्वामीजी वोलते थे—"मैं जानकी को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार करता हूँ और उन दोनों के जीवन-भर मैं उसका भर संभालूंगा। कृष्ण-भक्ति में हम दोनों साथ-साथ शान्तिपूर्वक रहेंगे और हमारा एक-दूसरे से विच्छेद कभी नहीं होगा।" इसके बाद प्रभुपाद जानकी की ओर मुड़े : "क्या तुम श्रीमान् मुकुंददास ब्रह्मचारी को अपना जीवन-साथी स्वीकार करती हो? क्या तुम हमेशा उसकी सेवा करोगी और कृष्ण-चेतना के कार्यों में उसकी सहायता करोगी?" तब जानकी ने उत्तर दिया, "हाँ, मैं मुकुंद को जीवन-भर के लिए अपना पति स्वीकार करती हूँ; हमारे बीच कभी विच्छेद नहीं होगा—न सुख में, न दुख में। मैं हमेशा उनकी सेवा करूँगी और हम कृष्ण-भक्ति में साथ-साथ शान्तिपूर्वक रहेंगे।"

अन्य कोई नहीं जानता था कि क्या हो रहा है, सिवाय स्वामीजी के। उन्होंने कीर्तन का संचालन किया; उन्होंने वर और वधू के बीच आदान-प्रदान के लिए पंक्तियाँ दीं और बताया कि उन्हें कहाँ बैठना था और क्या करना था। वास्तव में उन्होंने उन्हें विवाह-बन्धन में बंध जाने को कहा। उन्होंने भोज के लिए विविध व्यंजन भी तैयार किये थे, जो समारोह की पूर्णाहुति के लिए रसोई-घर में प्रतीक्षा कर रहे थे।

प्रभुपाद ने मुकुंद और जानकी को अपनी पुष्प मालाएँ बदल लेने को कहा और उसके बाद बैठने के स्थान में भी अदला-बदली करवाई। तब उन्होंने मुकुंद को जानकी की मांग में कुछ सिदूंर डालने और उसके बाद उसके सिर को साड़ी से ढक देने को कहा। तत्पश्चात् यज्ञ हुआ और अन्त में भोज।

विवाह की प्रमुख विशेषता थी विशाल भोज। यह एक विशेष सामाजिक सफलता सिद्ध हुआ। अतिथियों ने खाने में खूब उत्साह दिखाया, बार-बार मांगकर खाया और खाने के स्वाद की भूरि-भूरि प्रशंसा की। प्रभुपाद के अनुयायियों के लिए, जो प्रतिदिन चावल, दाल, सब्जी और चपातियों का सादा खाना खाने के अभ्यस्त थे, आज का भोज उन्मादक सिद्ध हुआ और वे जितना कुछ पा सके, उन्होंने जी-भरकर खाया। मुकुंद के बहुत से मित्र macrobiotics के अनुयायी थे और पहले उन्होंने मिष्ठान्नों के खाने में परहेज दिखाया। किन्तु खाने के प्रति औरों के उत्साह से उनका परहेज भी क्रमश: समाप्त हो गया और स्वामीजी द्वारा दक्षता से पकाए गये व्यंजनों के स्वाद ने उन्हें भी विवश कर दिया। जानकी बोली, "हे भगवन्, स्वामीजी तो बड़े अच्छे पाक शास्त्री हैं।" ब्रूस, जो प्रथम दीक्षा-

समारोह में उपस्थित नहीं हो सका था, पहली बार वैदिक यज्ञ देख रहा था और स्वामीजी की कचौड़ियों का स्वाद ले रहा था। उसने वहीं संकल्प किया कि वह अपने आपको कृष्ण-चेतना के प्रति अर्पित कर देगा और जितनी जल्दी सम्भव होगा उतनी जल्दी स्वामीजी का शिष्य बन जायेगा। लगभग सभी अतिथि आभार प्रकट करने और बधाई देने के लिए व्यक्तिगत रूप से स्वामीजी के पास गये। वे प्रसन्न थे और बोले—यह सब कृष्ण का आशीर्वाद है, उनका अनुग्रह है।

समारोह के पश्चात् मुकुंद और उसकी पत्नी ने बहुत से भक्तों और अतिथियों का अपने अपार्टमेंट में स्वागत-सत्कार किया। उस शाम सभी उत्साह से भर गये थे और हयग्रीव कविता सुना रहा था। तब किसी ने कवि एलन गिन्सबर्ग से साक्षात्कार का निर्धारित कार्यक्रम देखने के लिए टी.वी. खोल दिया और यह देखकर हर एक को अतीव प्रसन्नता हुई कि एलन ने हारमोनियम बजाना और हरे कृष्ण का कीर्तन करना शुरू कर दिया था। उसने यह भी कहा कि लोअर ईस्ट साइड में एक स्वामी हैं, जो मंत्र-योग सिखाते हैं। कृष्ण-चेतना नई वस्तु थी और उसके बारे में किसी ने पहले नहीं सुना था, फिर भी भक्तजन अब एक विख्यात व्यक्ति को टी.वी. पर कीर्तन करते देख रहे थे। पूरी संध्या मंगलमय प्रतीत हो रही थी।

अपने निवास-स्थान पर लौटकर प्रभुपाद ने कुछ सहायकों को लेकर समारोह के बाद की सफाई की। वे सन्तुष्ट थे। वे अपने कृष्णभावनामृत के लक्ष्य के कुछ प्रमुख तत्त्वों से लोगों का परिचय करा रहे थे। उन्होंने कुछ दीक्षित शिष्य बनाए; कुछ का विवाह कराया और लोगों को कृष्ण-प्रसाद खिलाया। अपने अनुयायियों से स्वामीजी बोले, "यदि मेरे पास साधन होते, तो मैं इस तरह के एक विशाल समारोह का आयोजन प्रतिदिन करता।" ●